244

माध्यमिक पाठ्यक्रम

लोककला

सिद्धांत

1

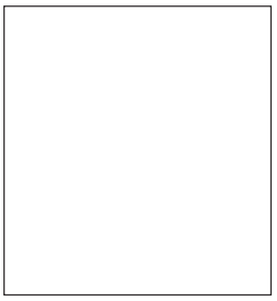

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

(शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्थान)

ए-24-25, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर- 62, नोएडा-201309 (उ.प्र.)

वेवसाइटः www.nios.ac.in, टॉल फ्री नंबर 18001809393

60 जीएसएम एनआईओएस वाटर मार्क पेपर पर मुद्रित

© राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

अगस्त, 2023 (..... कॉपी)

सचिव, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, ए-24-25, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62, नोएडा-201309 द्वारा प्रकाशित

सलाहकार समिति

प्रो. सरोज शर्मा
अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उ.प्र.)

डॉ. राजीव कुमार सिंह
निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उ.प्र.)

डॉ. संध्या कुमार
उप निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उ.प्र.)

पाठ्यक्रम समिति

डॉ. महेंद्र भानावत
निदेशक (सेवानिवृत्त)
भारतीय लोककला मंडल
352, श्री कृष्णपुरा, उदयपुर, राजस्थान

प्रो. आर. एन. पांडा
प्रोफेसर, उत्कल विश्वविद्यालय
भुवनेश्वर, ओडिशा

प्रो. राघवन पय्यानाद
विभागाध्यक्ष (सेवानिवृत्त)
लोक साहित्य अध्ययन विभाग
कालीकट विश्वविद्यालय, केरल

श्री मुश्ताक ख़ान
उप निदेशक (सेवानिवृत्त)
शिल्प संग्रहालय, नई दिल्ली

डॉ. कृष्णा जगनू
लोककला के लेखक और विशेषज्ञ,
विनायक नगर, उदयपुर, राजस्थान

डॉ. कैलाश कुमार मिश्र
अनुसंधान अधिकारी (सेवानिवृत्त)
लोक साहित्य अध्ययन, इंदिरा गाँधी
राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली

श्री वसंत निर्गुणी
अधिकारी (सेवानिवृत्त)
आदिवासी लोककला परिषद्
भोपाल, (म.प्र.)

श्री रबिन्द्रनाथ साहू
कला शिक्षक
उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
शिशुपालगढ़, भुवनेश्वर, ओडिशा

सुश्री अनीता देवराज
प्रधानाचार्य (सेवानिवृत्त)
डीएवी पब्लिक स्कूल
बहादुरगढ़, हरियाणा

डॉ. सर्बदमन मिश्र
सह-आचार्य
गवर्नमेंट कॉलेज, अजमेर
राजस्थान

श्री सतीश शर्मा
निदेशक, शिल्प भारती
ललित कला एवं शिल्प संस्थान
साउथ पटेल नगर, नई दिल्ली

डॉ. एम. के. पाल
परियोजना निदेशक (सेवानिवृत्त)
कला, शिल्प और सामाजिक
सांस्कृतिक अध्ययन, नई दिल्ली

श्री बिभास भट्टाचार्य
फ्रीलांस कला समीक्षक
बगुइयाटी, कलकता

सुश्री अल्पना पारीख
स्वतंत्र कलाकार
सेक्टर 21, नोएडा

श्रीमती संचिता भट्टाचार्य
वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी एवं
पाठ्यक्रम समन्वयक कला प्रदर्शन शिक्षा
रा.मु.वि.सं., नोएडा

पाठ लेखक

श्री मुश्ताक ख़ान
उप निदेशक (सेवानिवृत्त)
शिल्प संग्रहालय, नई दिल्ली

श्री सतीश शर्मा
निदेशक, शिल्प भारती
ललित कला एवं शिल्प संस्थान
साउथ पटेल नगर, नई दिल्ली

प्रो. राघवन पय्यानाद
विभागाध्यक्ष (सेवानिवृत्त)
लोक साहित्य अध्ययन विभाग
उकालीकट विश्वविद्यालय, केरल

श्री बिभास भट्टाचार्य
फ्रीलांस कला समीक्षक
बगुइयाटी, कोलकाता

डॉ. कृष्णा जगनू
लोककला के लेखक
और विशेषज्ञ, विनायक नगर
उदयपुर, राजस्थान

डॉ. महेंद्र भानावत
निदेशक (सेवानिवृत्त)
भारतीय लोककला मंडल
352, श्री कृष्णपुरा
उदयपुर, राजस्थान

श्री वसंत निर्गुणी
अधिकारी (सेवानिवृत्त)
आदिवासी लोककला परिषद्
भोपाल, (म.प्र.)

श्रीमती बी. एम. चौधरी
अतिथि प्राध्यापक (सेवानिवृत्त)
ललित कला महाविद्यालय
नई दिल्ली

संपादक

प्रो. के. एम. चौधरी
विभागाध्यक्ष (सेवानिवृत्त)
ललित कला महाविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. ए. के. सिंह
निदेशक, (सेवानिवृत्त)
भारत कला भवन, बनारस हिन्दू
विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

श्री मुश्ताक ख़ान
उपनिदेशक (सेवानिवृत्त)
शिल्प संग्रहालय,नई दिल्ली

डॉ. बालकृष्ण राय
उप निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उ.प्र.)

अनुवादक

डॉ. रिचा जैन
कलाा शिक्षाविद्
नई दिल्ली

श्रीमती बी. एम. चौधरी
अतिथि प्राध्यापक (सेवानिवृत्त)
ललित कला महाविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ. कनक लता सिंह
अनुसंधान अधिकारी
ललित कला अकादमी, नई दिल्ली

टाइप सेटिंग

श्री कृष्णा ग्राफिक्स
दिल्ली

आपके साथ दो शब्द

प्रिय शिक्षार्थी,

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान द्वारा निर्मित लोककला के माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में आपका स्वागत है। हमें उम्मीद है कि आप शिक्षा की मुक्त और दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में सीखने का आनंद लेंगे। लोककला में पारंपरिक जीवन-शैली, विविध संस्कृतियों और विभिन्न सामाजिक समूहों के द्वारा तैयार की गई वस्तुओं को दर्शाया गया है। कला एक दिलचस्प माध्यम है जो अनेक चित्रों और रंगों के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त करने का अवसर देता है। यह पाठ्यक्रम लोक और जनजातीय कला के माध्यम से धन अर्जित करने के साथ-साथ कला एवं कौशल की आंतरिक आवश्यकता को पूर्ण करेगा। यह पाठ्यक्रम लोक और जनजातीय कला में गहरी अंतर्दृष्टि प्रदान करेगा और आपको अपने व्यक्तित्व और बुनियादी ज्ञान को विकसित करने में मदद करेगा। पाठ्यक्रम में लोककला के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पहलू शामिल हैं तथा मूल्यांकन के क्रमशः 40 अंक और 60 अंक होंगे।

यह पाठ्यक्रम लोक और जनजातीय कला, माध्यम, तकनीक और शैलियों के परिचय पर जोर देते हुए लोक और जनजातीय क्षेत्र के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पहलुओं का पर्याप्त ज्ञान प्रदान करेगा। आप दीवार-चित्रण, धरा-चित्रण एवं चित्रण के अन्य माध्यमों से भी परिचित होंगे। पाठ्यक्रम के लिए प्रायोगिक कक्षाएँ आपके अध्ययन केंद्र पर आयोजित की जाएँगी।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान को भारत सरकार द्वारा शुरू किए गए मूक्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से पाठ्यक्रमों को प्रस्तुत करने में खुशी हो रही है। वीडियो व्याख्यान और चर्चा मंचों सहित माध्यमिक पाठ्यक्रमों के प्रमुख विषयों को मूक्स के रूप में विकसित किया गया है। गुणवत्तापूर्ण वीडियो देखने के लिए आपको www.swayam.gov.in पर पंजीकरण और नामांकन करना होगा। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान ई-विद्या चैनल 10 और 12 के माध्यम से अपने शैक्षिक कार्यक्रमों का सीधा प्रसारण करता है।

हमें उम्मीद है कि आप हमारे साथ लोककला सीखने का आनंद लेंगे। इस स्व-अध्ययन सामग्री के अंत में संलग्न फीडबैक फार्म में बेझिझक अपने सुझाव दें।

शुभकामनाओं सहित

पाठ्यक्रम समिति

अध्ययन सामग्री का उपयोग कैसे करें

आपने स्व-शिक्षार्थी बनने की चुनौती स्वीकार की है, इसके लिए बहुत-बहुत बधाई! एनआईओएस हर कदम पर आपके साथ है और आपको ध्यान में रखते हुए विशेषज्ञों की एक टीम की मदद से लोककला की सामग्री विकसित की गई है। इसमें स्व-अध्ययन प्रणाली के प्रारूप का पालन किया गया है। यदि आप दिए गए निर्देशों का पालन करते हैं, तो आप इस सामग्री से सर्वोतम लाभ प्राप्त करने में सक्षम होंगे। सामग्री में प्रयुक्त प्रासंगिक चिह्न आपका मार्गदर्शन करेंगे। आपकी सुविधा के लिए इन चिह्नों के बारे में नीचे बताया जा रहा है।

शीर्षक: यह भीतर की सामग्री का स्पष्ट संकेत देगा। इसे जरूर पढ़ें।

परिचय: यह आपको पाठ से परिचित कराएगा।

उद्देश्य: ये ऐसे कथन हैं जो बताते हैं कि पाठ के माध्यम से आपसे क्या सीखने की अपेक्षा की जाती है।

टिप्पणियाँ: महत्वपूर्ण बिंदुओं को लिखने या टिप्पणियाँ लिखने के लिए प्रत्येक पृष्ठ पर हाशिए पर दी गई खाली जगह होती है।

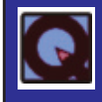

पाठगत प्रश्न : अति लघु उत्तरीय पाठगत प्रश्न प्रत्येक खण्ड के बाद पूछे जाते हैं, जिनके उत्तर पाठ के अंत में दिये जाते हैं। ये आपकी प्रगति की जाँच करने में आपकी सहायता करेंगे। उनका समाधान करें। यह परीक्षण आपको यह तय करने में मदद करेगा कि आगे बढ़ना है या वापस जाना है और फिर से सीखना है।

क्रियाकलाप : यह सीखने का एक तरीका है। सीखने वाला खुद को रचनात्मक रूप से अभिव्यक्त कर सकता है।

आपने क्या सीखा : यह पाठ के मुख्य बिंदुओं का सारांश है। यह पुनरावृत्ति में मदद करेगा। इसमें अपने बिंदु भी जोड़ने के लिए आपका स्वागत है।

सीखने के प्रतिफल : आपको यह जाँचने में मदद करेंगे कि आपने पाठ के माध्यम से अपेक्षित ज्ञान को ग्रहण कर लिया है।

पाठांत प्रश्न : इनमें लंबे और छोटे प्रश्न होते हैं जो पूरे विषय की स्पष्ट समझ के लिए अभ्यास करने का अवसर प्रदान करते हैं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर : इससे आपको यह जानने में मदद मिलेगी कि आपने प्रश्नों के कितने सही उत्तर दिए हैं।

विषय सामग्री पर एक विहंगम दृष्टि

मॉड्यूल 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना

1. लोक व जनजातीय कला का परिचय
2. लोक व जनजातीय कला के रूप
3. कलाकारों और विद्वानों का योगदान

मॉड्यूल 2 : माध्यम, तकनीक और शैली

4. पारंपरिक और समकालीन विधि और सामग्री
5. लोककला के प्रतीक एवं अभिप्राय
6. लोक व जनजातीय कला का महत्व और उपयोगिता
7. संभावना और अवसर

मॉड्यूल 3: भित्ति चित्र

1. मधुबनी कला
2. वर्ली चित्रकला
3. सांझी कला
4. पिथौरा

मॉड्यूल 4: जमीन पर बनने वाले चित्र

5. रंगोली
6. अल्पना
7. कोलम
8. माँडणा

मॉड्यूल 5: चित्रों के अन्य माध्यम

9. कपड़े पर चित्रकारी
10. मिट्टी पर चित्रकारी
11. लकड़ी पर चित्रकारी
12. कठपुतली बनाना

विषय-सूची

मॉड्यूल 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना

1. लोक व जनजातीय कला का परिचय 1
2. लोक व जनजातीय कला के रूप 11
3. कलाकारों और विद्वानों का योगदान 25

मॉड्यूल 2 : माध्यम, तकनीक और शैली

4. पारंपरिक और समकालीन विधि और सामग्री 47
5. लोककला के प्रतीक एवं अभिप्राय 58
6. लोक व जनजातीय कला का महत्व और उपयोगिता 72
7. संभावना और अवसर 83
   - लोककला पाठ्यक्रम 97
   - प्रश्नपत्र का प्रारूप 101
   - नमूना प्रश्नपत्र 103
   - अंक योजना 109

शिक्षक अंकित मूल्यांकन कार्य (टीएमए) के लिए निर्धारित पाठ

पाठ 5 और पाठ 7

टिप्पणी : पाठ्यक्रम को दो भागों में विभाजित किया गया है :

(i) अनुशिक्षक अंकित मूल्यांकन-पत्र (टीएमए) के लिए पाठ

(ii) सार्वजनिक परीक्षा के प्रश्न पत्र हेतु पाठ

भाग (ii) के पाठों को पुनः दो भागों में इस प्रकार विभाजित किया गया है :

(क) वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के लिए पाठ

(ख) निबंधात्मक प्रश्नों के लिए पाठ

पाठ्यक्रम का विभाजन लोक कला ,कोड 244		
कुल पाठों की संख्या 07		
मॉड्यूल संख्या और नाम	**टीएमए 40%**	**सार्वजनिक परीक्षा 60%**
	पाठों की संख्या 03	**पाठों की संख्या 04**
1. **लोक कला का परिचय**	**पाठ-2** लोक व जनजातीय कला के रूप	**पाठ 1** लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना **पाठ 3** कलाकारों और विद्वानों का योगदान
2. **माध्यम ,तकनीक और शैलियाँ**	**पाठ-5** लोक कला के प्रतीक और रूपांकन **पाठ-7** सम्भावना और अवसर	**पाठ-4** पारंपरिक और समकालीन तकनीक और सामग्री **पाठ-6** लोक व जनजातीय कला के महत्व और उपयोगिता

मॉड्यूल 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना

1. लोक व जनजातीय कला का परिचय
2. लोक व जनजातीय कला के रूप
3. कलाकारों और विद्वानों का योगदान

1

लोक व जनजातीय कला का परिचय

भारतीय लोककला मूलत: प्राचीन काल की है और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होती रही है। कलाकारों ने महाकाव्यों, मिथकों और किंवदंतियों, देवी-देवताओं की कहानियों आदि से कला के विषयों को चुना। पारंपरिक कलाकारों ने स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री, यानी सब्जियाँ, फल, मिट्टी, पत्थर आदि से तैयार प्राकृतिक रंगों का उपयोग किया। उन्होंने अपनी छत, दीवार, आंगन, कपड़े और विभिन्न प्रकार की वस्तुओं पर चित्रकारी की।

भारत में लोककला की उत्पत्ति प्रागैतिहासिक कला से होती है और हमारे पूर्वज आज से दस लाख से भी अधिक सालों पहले इस धरती पर आए। एक दिन उन्होंने औजारों का आविष्कार किया। लोगों को धीरे-धीरे पता चला कि कुछ पत्थरों या डंडों के आकार कुछ कार्यों के लिए अधिक उपयुक्त थे, और उन्होंने उन्हें भविष्य के उपयोग के लिए अलग रख दिया। इसके अलावा, उन्होंने आकार को सुधारने के लिए औजारों को तेज़ करना शुरू कर दिया। यह पहला शिल्प था। अध्ययनों से पता चला है कि गुफाओं में रहने वालों और बच्चों की विकास प्रक्रिया के बीच समानता थी। जब कोई बच्चा चित्र बनाता है तो वह अपने परिवेश के साथ-साथ अपनी भावनाओं को भी दर्शाता है। इसी तरह गुफा-कला ने भी अपने परिवेश के आलंकारिक और प्रतीकात्मक चित्रों के माध्यम से भावनाओं को प्रतिबिंबित किया। आदिम लोगों का जीवन सूर्य, चंद्रमा और बारिश जैसी प्रकृति की शक्ति से संचालित होता था जिसे समझना मुश्किल था। उन्होंने महसूस किया कि प्रकृति की इन ताकतों को दर्शाने वाली आकृतियों और प्रतीकों को स्थापित और चित्रित किया या उकेरा जाना चाहिए। धीरे-धीरे यह मानव जीवन का अभिन्न अंग बन गया।

प्रिय शिक्षार्थी, इस पाठ में आप भारतीय कला के विभिन्न लोक और आदिवासी रूपों के बारे में जानेंगे। मध्य प्रदेश में भीमबेटका के प्रागैतिहासिक चित्रों से आप सीखेंगे कि पश्चिम बंगाल में जादुपट की आदिवासी कला और बिहार में मधुबनी की लोककला ने आगे चलकर कैसे आकार ग्रहण किया।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद आप :

- लोक और जनजातीय कला की संक्षिप्त पृष्ठभूमि का वर्णन कर सकेंगे;
- भारतीय कला की प्रागैतिहासिक चित्रकला की व्याख्या कर सकेंगे;
- भारतीय कला के विभिन्न प्रागैतिहासिक चित्रों का वर्णन कर सकेंगे;
- भारतीय कला कब और कैसे लोक और जनजातीय कला में परिवर्तित हुई, इसका उल्लेख कर सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार की लोक और जनजातीय कलाओं का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

1.1 भीमबेटका पेंटिंग

आइए जानें शैल चित्रण (रॉक पेंटिंग) के बारे में

शीर्षक : भीमबेटका

राज्य : मध्य प्रदेश

प्रकार : शैल चित्रण (रॉक पेंटिंग)

अवधि : 3000 ई.पू. (पूर्व-ऐतिहासिक युग)

कलाकार : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

आप जानते हैं कि लोक और जनजातीय कला की जड़ें प्रागैतिहासिक शैल चित्रों में निहित हैं। भारत के शैल चित्रों के अध्ययन से लोक और जनजातीय चित्रकला को समझने और उसकी सराहना करने में मदद मिलेगी।

भारत के प्रागैतिहासिक शैल चित्रों को अब मात्रात्मक और गुणात्मक रूप से महत्वपूर्ण कार्यों के रूप में माना जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में शिकारियों और खाद्य संग्रहकर्ताओं का निवास था। बाद में पुरातात्विक खोजों ने साबित कर दिया कि शिकारी और भोजन-संग्रहकर्ता सबसे पहले भारतीय धरती पर मौजूद थे। इसके अलावा, उनकी उपस्थिति न केवल पत्थर के औजारों और अन्य उपकरणों से, बल्कि एक निश्चित तिथि के बाद, शैल चित्रण और शैल उत्कीर्णन द्वारा भी प्रमाणित होती है। साथ ही, प्रागैतिहासिक भारतीय कला की प्रारंभिक अभिव्यक्ति में प्रत्येक चित्र मूल्यवान है।

सामान्य विवरण

हमारे देश में लगभग सात सौ ऐसे स्थल हैं और प्रत्येक स्थल में एक से तीस गुफाएँ हैं, जहाँ लोग रहते थे। मध्य प्रदेश का 'भीमबेटका' उनमें से एक है। आप में से कुछ लोगों ने इसे देखा होगा। चित्रकला के लिए रंगों की शैली, सामग्री और उपयोग इसके प्रागैतिहासिक चरित्र को दर्शाते हैं। यहाँ दिखाये गये चित्र (चित्र 1.1) में जंगल के जानवर हैं और पुरुष अपने आदिम शिकार के औजारों के साथ हैं। वे पत्थर, कुल्हाड़ी, लाठी, मुद्गर, भाला, धनुष और तीर के माध्यम से

शिकार पर वार करते हैं। हम पुरुषों और जंगली जानवरों के बीच तेज़ी से टकराव की तस्वीरें पाते हैं। यानी शिकार के दृश्य और साथ ही धर्म के प्रारंभिक संकेत विभिन्न आकृतियों में उपलब्ध हैं।

चित्र 1.1: भीमबेटका

पाठगत प्रश्न 1.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. भीमबेटका पेंटिंग किस प्रकार की पेंटिंग है–
   (i) शैल पेंटिंग (ii) क्ले पेंटिंग
   (iii) फड़ पेंटिंग (iv) मिथिला पेंटिंग
2. भीमबेटका शैल चित्र किस राज्य में मिलते हैं–
   (i) उत्तर प्रदेश (ii) मध्य प्रदेश
   (iii) बिहार (iv) बंगाल

1.2 जोगीमारा पेंटिंग

शिक्षार्थियो, अब हम जोगीमारा फ्रेस्को पेंटिंग (दृश्यकला चित्र) के बारे में जानेंगे।

शीर्षक : जोगीमारा
राज्य : छत्तीसगढ़
प्रकार : फ्रेस्को पेंटिंग
अवधि : पहली शताब्दी ई.पू.
कलाकार : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

आप जानते हैं कि भारत में प्रागैतिहासिक शैल चित्रकला ने झोब, आमरी, नंदरा, नल, शाही टंप और हड़प्पा-मोहनजोदड़ो के माध्यम से आद्य-ऐतिहासिक युग में प्रवेश किया था। छत्तीसगढ़ के सरगुजा के रामगढ़ पहाड़ी की जोगीमारा की गुफा में कुछ चित्रों की खोज की गई थी। विशेषज्ञों ने सुझाव दिया है कि इन चित्रों को ऐतिहासिक युग के चित्रों के रूप में रेखांकित किया जा सकता है। ये हैं- 'फ्रेस्को पेंटिंग्स'। यहाँ पत्थर या दीवार पर चूने और रेत या अन्य सामग्री का प्लास्टर बिछाया जाता है। उस गीले प्लास्टर पर कलाकार चित्र बनाते हैं और सूखने के बाद उसमें रंग भरते हैं। फिर, अंत में, यह एक स्थायी पेंटिंग बन जाती है।

चित्र 1.2: जोगीमार

सामान्य विवरण

इस तस्वीर में आप जानवर और इंसान दोनों की आकृतियाँ देख सकते हैं। वे लाल रंग में रंगे हुए हैं, सीमाओं को काले रंग से चिह्नित किया गया है, और आधार सफ़ेद है। कभी-कभी पीले रंग का प्रयोग होता था, लेकिन नीले रंग का प्रयोग उनके द्वारा कम ही किया गया है। आम तौर पर ये चित्र एक बिंदु से वृत्त में बनाए जाते थे, और वृत्त ज्यामितीय आकृतियों से भरे होते थे। जोगीमारा में आप देख सकते हैं कि अधिकांश चित्रों का आधार धार्मिक है। धार्मिक एवं अलौकिक भावनाएँ उस समय अधिक महत्वपूर्ण थी। चित्रांकन की शैली निराली थी, लेकिन प्रागैतिहासिक काल के शैलचित्रों का प्रभाव था। प्रागैतिहासिक शैल पेंटिंग से शुरू हुई विरासत जोगीमारा के माध्यम से आदिवासियों और लोकजन की कला को प्रभावित करती रही।

पाठगत प्रश्न 1.2

1. जोगीमारा फ्रेस्को पेंटिंग किस राज्य में मिलती है?
2. इस पेंटिंग का समयविधि क्या है?
3. जोगीमारा पेंटिंग में आमतौर पर किन रंगों का प्रयोग किया जाता था?
4. जोगीमारा पेंटिंग में किस रंग का प्रयोग कम होता था?

1.3 लोककला का वर्गीकरण

इस खंड में आप कला के वर्गीकरण के बारे में जानेंगे। प्रागैतिहासिक शिकारी और खाद्य संग्रहकर्ताओं ने धीरे-धीरे कृषि और खेती को अपनी जीवनशैली में शामिल कर लिया। बचाव और सुरक्षा उनके लिए महत्वपूर्ण हो गई। गुफावासी सुरक्षा के लिए बस्ती की तरह एक समूह में रहने लगे। दिन-प्रतिदिन क्षेत्र विस्तार हो रहा था और लोगों ने अन्य पड़ोसी समूहों के बीच अपने विचारों और सुझावों का आदान-प्रदान शुरू किया।

समाजों के असमान विकास के कारण कला दो शाखाओं में विभक्त हो गई। कुछ शिकारी और खाद्य संग्रहकर्ता कृषि और खेती में लगे हुए थे। इसके विपरीत, उनमें से कुछ शिकारी और खाद्य संग्रहकर्ता बने रहे। जीवनशैली और अन्य कारकों का यह असमान विकास उनकी कला में परिलक्षित होता रहा। इस प्रकार, गुफा कला दो अलग-अलग खंडों में परिवर्तित हो गई–

1. लोककला (वे लोग जिन्होंने कृषि को चुना था)।
2. जनजातीय कला (वे लोग जो शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता बने रहे)।

1.4 जनजातीय चित्रकला

अब हम पश्चिम बंगाल की आदिवासी कला के बारे में जानेंगे–

शीर्षक : जादूपट पेंटिंग
राज्य : पश्चिम बंगाल
प्रकार : जनजातीय कला
अवधि : समकालीन
कलाकार : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

लोक और आदिवासी दोनों प्रकार के कलाकार अपनी कला में अपनी सांस्कृतिक पहचान स्थापित करना चाहते थे। उनकी कला मुख्य रूप से कर्मकांड से जुड़ी और धार्मिक थी। जो कहानियाँ वे सुनते थे, उन्हें व्यक्त करने के लिए वे उन्हें चित्रित करना पसंद करते थे। पेंटिंग एक पट्टचित्र के रूप में तथा उभरकर सामने आयी।

यह जादूपट पश्चिम बंगाल के संथालों की एक विशिष्ट पेंटिंग है। यह समुदाय भारत की तीसरी सबसे बड़ी जनजाति है। यह बड़े पैमाने पर पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, झारखंड और छत्तीसगढ़ में निवास करती है। इन चित्रकारों को 'जादुपटुआ' के नाम से जाना जाता है।

चित्र 1.3: जादूपत

सामान्य विवरण

इस पेंटिंग में चित्र सरल हैं और एक ही सपाट सतह पर चित्रित किए गए हैं। राधा और कृष्ण के दिव्य प्रेम की कहानियों को क्षैतिज पट्टियों द्वारा विभाजित पैनलों में सरल स्पष्ट छवियों की एक शृंखला में दर्शाया गया है। पेड़ों, फूलों या चट्टानों को सरल आरेखीय रूपों में दर्शाया गया है। आकृतियों को सामने से दिखने वाले परिप्रेक्ष्य में एक मानक लहराती रेखा के समान तैयार किया गया है जो झुके हुए माथे, नाक, होंठ और ठोड़ी को दर्शाते हैं। आँखों को सामान्यतया विशाल दर्शाया गया है।

कुछ रिक्त स्थान अभिव्यक्ति उद्देश्यों के लिए निष्पादित या तैयार किए जाते हैं और रंग को अवास्तविक रूप से नाटकीय प्रभाव पैदा करते हुए दर्शाया जाता है। चित्रों को बहुत आकर्षक

बनाने के लिए रंग और रेखाओं पर प्रभाव दिया जाता है। कृष्ण के शरीर के रंग का नीला, राधा के रूप को नारंगी और गोपी को रूप में पीले रंग का प्रतीकात्मक उपयोग है। ये आकार आदिवासी और लोककला की समानता की अवहेलना करते हुए बहुत सारी प्रवृत्तियों को दिखाती हैं।

पाठगत प्रश्न 1.3

1. जादूपत किस प्रकार की कला है?
2. यह किस राज्य की तथा किस परंपरा से जुड़ा है?
3. जादूपटुआ कौन हैं?

क्रियाकलाप

आप पुस्तकालय का दौरा करें और जादूपट की जादुई पेंटिंग के बारे में कुछ जानकारी एकत्र करें। अब आप नाटकीय प्रभाव पैदा करते हुए, पेंटिंग में दर्शाए अभिव्यक्ति और रंग के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करें।

.....

.....

.....

1.5 लोक चित्रकला

शिक्षार्थियों, आपने आदिवासी कला के बारे में सीखा है, अब आप मधुबनी लोककला को जानेंगे।

शीर्षक : **मधुबनी पेंटिंग**
राज्य : **बिहार**
प्रकार : **लोककला**
अवधि : **समकालीन**
कलाकार : **अज्ञात**

संक्षिप्त परिचय

यह विश्वास करना काफी तर्कसंगत है कि मनुष्य बचपन से ही रेखाओं और स्ट्रोक की मदद से चित्र बनाने में गहरी दिलचस्पी लेता है। यह प्रारंभिक युग के लोगों के बीच प्रचलित प्रथा रही होगी जिन्होंने प्रकृति और जीवन के माध्यम से अपने अनुभवों और इंद्रियबोध की क्षमता के अनुसार अपने रहने की जगह की दीवारों को चित्रित किया। संपूर्ण मध्य गंगा का मैदान और विशेषकर बिहार इसका अपवाद नहीं है, क्योंकि कई क्षेत्रों की तरह, गहरी जड़ें जमाने वाली पेंटिंग परंपरा के संदर्भ में भी इसका एक अलग स्थान है। अगर आप दुनिया के नक्शे पर नजर डालें तो आपको

उस पर मधुबनी का गाँव नहीं मिलेगा. हालांकि मधुबनी पेंटिंग सर्वत्र प्रसिद्ध है। इसे मिथिला पेंटिंग के नाम से भी जाना जाता है। इस क्षेत्र के भीतर, एक समृद्ध अनुष्ठान और घरेलू चित्रकला परंपरा बहुत प्रारंभिक काल से जीवित है। मिथिला में चित्रकला की परंपरा का प्रतिनिधित्व महिलाओं के तीन समुदायों- कायस्थ, ब्राह्मण और दुसाध (हरिजन) द्वारा किया जाता है। मिथिला के लोग अत्यधिक धार्मिक हैं, और वे स्वाभाविक रूप से शिव, शक्ति और विष्णु की पूजा से प्रभावित हैं। देवी दुर्गा को 'इष्टदेवी' के रूप में पूजा जाता है। किसी भी मधुबनी पेंटिंग की विषय वस्तु अवसर के आधार पर निश्चित होती है और हर अवसर के लिए एक नई चित्रकला चित्रित की जाती है।

चित्र 1.4: अर्धनारीश्वर, मधुबनी पेंटिंग

सामान्य विवरण

पेंटिंग में आप 'अर्धनारीश्वर की छवि' देखते हैं। आइए अब इस पेंटिंग के बारे में विस्तार से जानते हैं। अलग-अलग रंगों को समेटे हुए आत्मविश्वास से भरी और गहरी रेखाओं के साथ पेंटिंग के विशाल क्षेत्र पर लाल और पीले रंग के मोनोक्रोम वॉश द्वारा अंतरिक्ष को विभाजित किया गया है और इसके लिए एक पृष्ठभूमि प्रदान की गई है। प्रारंभ में, पारंपरिक विषयों को अनुष्ठान चित्रों

में दोहराया गया था, लेकिन जैसे ही इस तरह के चित्रों की मांग बढ़ी, मिथकों और यहाँ तक कि व्यक्तिगत जीवन सहित अन्य घटनाओं और कहानियों को भी शामिल किया गया। वनस्पति रंगों के स्थान पर सिंथेटिक और कपड़े के रंगों का नियमित उपयोग प्रचलन में आ गया। टहनियों के स्थान पर कलम का प्रयोग ब्रुश के रूप में करना अधिक उपयुक्त पाया गया।

पाठगत प्रश्न 1.4

1. मधुबनी किस प्रकार की कला है?
2. इसका संबंध किस राज्य से है?
3. आम तौर पर लोगों के कौन से समुदाय इस पेंटिंग का प्रतिनिधित्व करते हैं?

आपने क्या सीखा

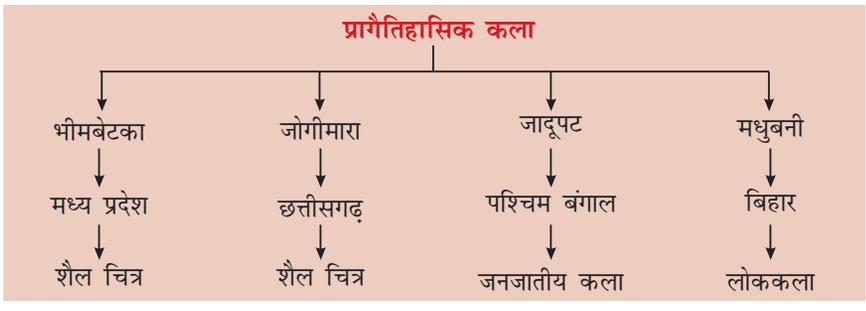

सीखने के प्रतिफल

शिक्षार्थी

- प्रागैतिहासिक काल से लेकर प्राचीन काल तक की लोक और जनजातीय कला की प्रतीकात्मक विशेषताओं को उनकी अलग-अलग कलाकृति को पहचान कर उनका उपयोग करते हैं।
- किसी भी लोककला को बनाने के लिए विभिन्न शैलियों, सामग्रियों और संरचनाओं का उपयोग करते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. शैल पेंटिंग (शैल चित्रण) क्या है? प्रागैतिहासिक शैल चित्रकला का एक उदाहरण दीजिए और उसका वर्णन कीजिए।
2. फ्रेस्को पेंटिंग क्या है? फ्रेस्को पेंटिंग का एक उदाहरण दीजिए और उसका वर्णन कीजिए।

3. गुफा काल की कला को किन विभागों में विभाजित किया था और क्यों?
4. जनजातीय कला का एक उदाहरण दीजिए और उसकी व्याख्या कीजिए।
5. लोककला का एक उदाहरण दीजिए और उसकी व्याख्या कीजिए।
6. उन देवी-देवताओं के नाम लिखिए जो मधुबनी पेंटिंग से जुड़े हैं?
7. मधुबनी पेंटिंग्स में आजकल आपको कौन से दो प्रमुख बदलाव देखने को मिले हैं? प्रस्तुत कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1.1

1. (i) शैल पेंटिंग
2. (ii) मध्यप्रदेश

1.2

1. फ्रेस्को पेंटिंग
2. मध्यप्रदेश
3. पहली शताब्दी ईसा पूर्व
4. लाल, काला, सफ़ेद, पीला
5. नीला

1.3

1. जनजातीय कला
2. पश्चिम बंगाल
3. जादूपट पेंटिंग बनाने वाले संथाल

1.4

1. लोककला
2. बिहार
3. कायस्थ, ब्राह्मण और दुसाध

शब्दावली

सिंथेटिक : प्राकृतिक नहीं

जादू : जादू

संथाल : झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा के आदिवासी लोग।

2

लोक व जनजातीय कला के रूप

पिछले पाठ में हमने लोक चित्रकला के बारे में जाना। इस पाठ में हम लोक और आदिवासी चित्रकला के विभिन्न रूपों को जानेंगे। भारत अपनी सांस्कृतिक विविधता के लिए विश्वविख्यात है। यहाँ के प्रत्येक सांस्कृतिक अंचल की अपनी विशिष्ट लोक और आदिवासी कलाएँ हैं। अपने परंपरागत स्वरूप में लोक तथा आदिवासी चित्रकला क्षेत्र-विशेष के जनसामान्य द्वारा किया गया वह कलाकर्म है जिसके मूल में लोक-कल्याण का विचार होता है और जो अवसर विशेष से जुड़े अनुष्ठान एवं आवश्यकताओं को संपन्न करने हेतु किया जाता है। सामान्यतया यह कलाकर्म आजीविका कमाने हेतु नहीं बल्कि अपने जीवन को प्रचलित विश्वासों और मान्याताओं के अनुरूप सुख एवं शांतिमय बनाने हेतु पारलौकिक शक्तियों से आशीर्वाद प्राप्ति के लिए किया जाता है। ये चित्र अपने आस-पास सहज उपलब्ध प्राकृतिक रंगों से दीवार और भूमि पर बनाए जाते हैं। चित्रांकन हेतु किसी वृक्ष या घास की टहनी या कपड़े का प्रयोग किया जाता है। पीली मिट्टी, गेरू, खड़िया, काजल, चावल का आटा, हल्दी, सिंदूर, महावर, नील, गोबर और वृक्षों के फूल-पत्तों से प्राप्त रंगों के प्रयोग से अंकित किए जाने वाले इन चित्रों को सामान्यतया स्त्रियां ही बनाती हैं। ये चित्र परंपरागत रूप से बदलते अवसरों के साथ लगभग वर्ष भर बनते-बिगड़ते रहते हैं। अत: स्त्रियाँ बचपन से ही इन्हें आत्मसात करती चलती हैं और चित्रांकन की यह धारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्वत: ही हस्तांतरित होती चलती है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- भारतीय लोक एवं आदिवासी कलाओं की पृष्ठभूमि एवं उनका औचित्य प्रस्तुत कर सकेंगे;
- विभिन्न लोक एवं आदिवासी चित्र शैलियों को पहचान कर वर्णन कर सकेंगे;
- लोक एवं आदिवासी चित्रों में प्रयुक्त होने वाली चित्रण तकनीक एवं उनके माध्यम का उल्लेख कर सकेंगे;
- लोक एवं आदिवासी चित्रों की प्रमुख शैलियों के महत्व के बारे में वर्णन कर सकेंगे;
- लोक एवं आदिवासी चित्रों में महिलाओं के योगदान पर प्रकाश डाल सकेंगे।

भारत की प्रमुख लोक एवं आदिवासी कलाएँ

अब आप भारत की विभिन्न लोक एवं आदिवासी कलाओं के बारे में पढ़ेंगे। कुछ प्रमुख लोककलाएँ तथा आदिवासी कलाएँ इस प्रकार हैं :

- महाराष्ट्र की वार्ली चित्रकारी एवं आदिवासियों द्वारा दीवार पर बनाए जाने वाले कोंकण चित्र।
- मध्य प्रदेश के गोंड आदिवासियों द्वारा चित्रित किए जाने वाले गोंड चित्र।
- गुजरात एवं मध्य प्रदेश के राठवा एवं भील आदिवासियों द्वारा दीवारों पर अंकित किए जाने वाले 'पिठौरा भित्ति चित्र'।
- उड़ीसा के सौरा आदिवासियों द्वारा दीवारों पर बनाए जाने वाली 'एड़ीतल'/'इड़ीतल' चित्रकला।
- पश्चिम बंगाल एवं झारखंड के संथाल आदिवासियों में प्रचलित कागज़ पर बने 'चक्षुदान' चित्र।
- उड़ीसा में कपड़े के पट एवं ताड़पत्र पर बनाए जाने वाले 'पटचित्र' एवं दीवार पर बनाए जाने वाले 'झूटी चित्र'।
- हिमालय एवं लद्दाख में कपड़े पर चित्रित किए जाने वाले 'थंका चित्र'।
- बिहार के मिथिला क्षेत्र में प्रचलित दीवार पर बनाए जाने वाले 'मधुबनी लोक चित्र'।
- राजस्थान में दीवार एवं भूमि पर बनाए जाने वाले 'माण्डना' चित्र तथा कपड़े पर बनाए जाने वाले 'फड़ चित्र'।
- मध्य प्रदेश में दीवार पर बनाए जाने वाले 'चित्रावण', 'सांझी', 'माण्डना', 'जिरौति', 'करवाचौथ' चित्र।
- पश्चिम बंगाल के 'कालीघाट' एवं 'पटुआ' पटचित्र।
- आंध्र प्रदेश, तेलंगाना में कपड़े पर बनाए जाने वाले 'कलमकारी' एवं 'चेरियाल पटचित्र'।

उपरोक्त चित्र शैलियों के अतिरिक्त राजस्थान एवं मध्य प्रदेश में भूमि पर बनाए जाने वाले माण्डना, महाराष्ट्र एवं गुजरात के रंगोली, बिहार के अरिपन, बंगाल के अल्पना, तमिलनाडु के कलम तथा केरल में प्रचलित कोलम (भूमिचित्र) प्रमुख हैं।

2.1 भारत की प्रमुख क्षेत्रीय लोक एवं आदिवासी कलाएँ

अब आप महाराष्ट्र की चित्रकथी कला को जानेंगे।

2.1.1 चित्रकथी चित्र

शीर्षक : चित्रकथी
स्थान : महाराष्ट्र
प्रकार : चित्रकला
समय : समकालिक

संक्षिप्त परिचय

चित्रकथी शब्द, दो शब्दों से मिल कर बना है- चित्र एवं कथी (कथा), जिसका आशय है चित्रों के माध्यम से कथा वाचन। यह महाराष्ट्र में प्रचलित एक प्राचीन एवं आंचलिक चित्रण शैली है। इन चित्रों का प्रयोग पैठण एवं पिंगुली गाँवो के घुमक्कड़ कथावाचक अपने प्रदर्शनों को प्रभावशाली एवं रुचिकर बनाने हेतु करते थे। कालांतर में इस परंपरा की लोकप्रियता कम होती गई और यह मृतप्राय हो गई । पिछले कुछ वर्षों में इसके पुनर्जीवन के प्रयास किए जा रहे हैं।

सत्रहवीं एवं अठाहरवीं सदी में यह चित्रशैली अपने चरम सीमा पर थी। इसका प्रसार महाराष्ट्र के साथ-साथ सीमावर्ती आंध्रप्रदेश एवं कर्नाटक में भी था। ये चित्र इस क्षेत्र के घुमक्कड़ कथा वाचक आदिवासी समुदाय द्वारा बनाए एवं काम में लाए जाते थे। वर्तमान में चित्रकथी शैली के कुछ चित्रकार महाराष्ट्र के सिंधु दुर्ग जिले के कुडाल गाँव में इस चित्रण परंपरा को जीवित रखे हुए हैं।

ये हाथ से बने कागज़ों पर प्राकृतिक रंगों से चित्रित किए जाते हैं। इनमें रामायण एवं महाभारत जैसी कथाओं के स्थानीय जनप्रिय कथानक को बहुत ही मौलिक एवं रुचिकर ढंग से दर्शाया जाता है। अत: एक संपूर्ण कथानक के लिए अनेक कागज़ों पर घटनाक्रम की शृंखला तैयार हो जाती है, कथा गायन के समय इन्हें एक के बाद एक दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। एक कथा की सभी घटनाओं को प्रदर्शित करने वाले सारे चित्र एक साथ बाँधकर रखे जाते हैं, जिन्हें 'पोथी' कहा जाता है। चित्रकार कथा वाचकों के पास ऐसी अनेक चित्र पोथियाँ होती हैं जोकि पारिवारिक सम्पत्ति समझी जाती हैं। इन स्थानीय लोक चित्रों में भूरे-कत्थई पत्थर से प्राप्त रंग का अधिक प्रयोग किया जाता है तथा विशाल नेत्रों वाली शैलीगत आकृतियाँ इन चित्रों को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान करती हैं। इन चित्रों में सरल एवं स्वत: स्फूर्त तूलिका संघातों से सहज एवं सरल चित्रकारी देखने को मिलती है। इन चित्रों के बनाए जाने के दो प्रमुख केंद्र थे- पिंगुली एवं पैठण।

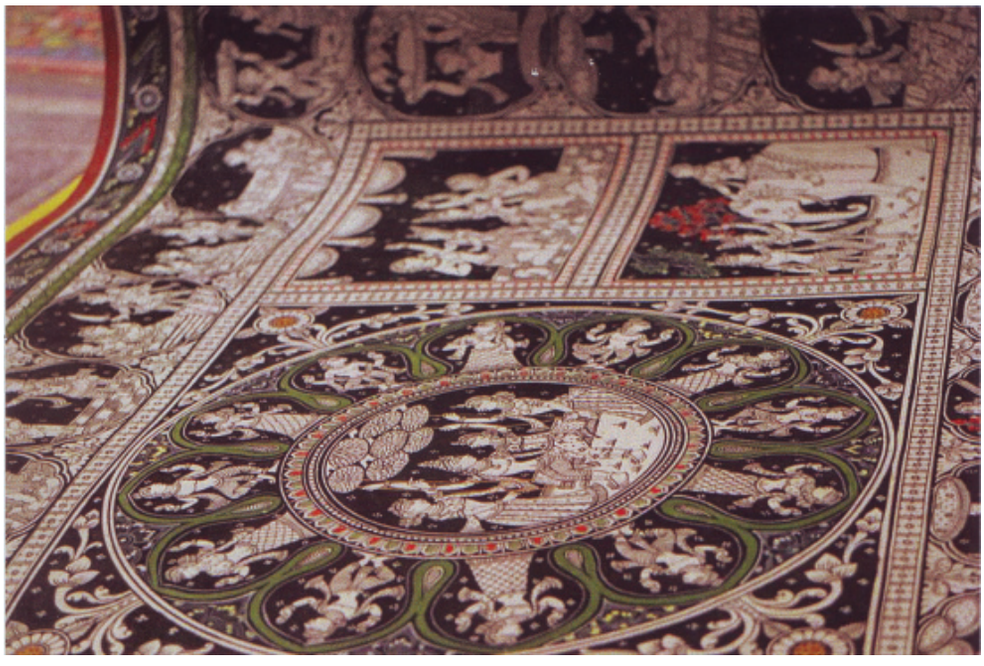

चित्र 2.1: चित्रकथी

सामान्य विवरण

इन चित्रों के प्रचलन के बारे में एक मत यह भी है कि इनका उद्‌गम स्थल महाराष्ट्र का पैठण नगर है। गोदावरी नदी के पठार क्षेत्र में स्थित यह नगर एक तीर्थ स्थल है। विठ्ठल मंदिर के दर्शनार्थ आने वाले हज़ारों तीर्थयात्री इन चित्रों को अपनी तीर्थ यात्रा की यादगार के रूप में ले जाते थे। प्रस्तुत चित्र में रामायण और महाभारत काल की कहानियों को चित्रित किया गया है। आम तौर पर रामायण, महाभारत के साथ-साथ 'विठ्ठल परचविशी' एवं 'छलछण्डु आरण्यक' पर आधारित चित्र भी बनाए जाते थे जिनका आकार सामान्यत: 30 से.मी. 40 से.मी. रखा जाता था। संपूर्ण विठ्ठल तीर्थयात्रा दर्शाने हेतु बड़े आकार के चित्र भी बनाए जाते थे। इन चित्रों की चित्रण शैली के बारे में माना जाता है कि इनकी शैली तत्कालीन लघुचित्र एवं मंदिरों की दीवारों पर बनाए जाने वाले भित्तिचित्रों की शैली से प्रभावित है। चित्रकार चित्रण हेतु रंग, वनस्पति एवं प्राकृतिक पदार्थों से स्वयं तैयार करते थे।

चित्रकथी चित्रों को कभी-कभी पिंगुली चित्र भी कहा जाता है, क्योंकि महाराष्ट्र के सिंधु दुर्ग क्षेत्र में स्थित यह गाँव आज भी इस चित्र परंपरा को जीवित बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। कहते हैं कि यहाँ के ठाकर/ठक्कर/ठाकुर घुमक्कड़ आदिवासी जो चित्रकथा प्रदर्शन के साथ-साथ कठपुतली प्रदर्शन भी करते थे तथा इसका प्रयोग शिवाजी गुप्तचरों के लिए भी करते थे। महाराष्ट्र के कोंकण के ग्रामीण क्षेत्र में चित्रकथी एवं कठपुतली का प्रदर्शन उत्सवों एवं त्योंहारों के अवसर पर किया जाता है। यह प्रदर्शन एक मण्डली द्वारा किया जाता है जिसमें ढोलकी, टुनटुना, मंजीरा एवं शंख आदि वाद्य भी प्रयुक्त किए जाते हैं। चित्रकथी चित्रों का एक महत्वपूर्ण एवं बड़ा संग्रह राष्ट्रीय शिल्प संग्रहालय, नई दिल्ली एवं राजा दिनकर केलकर संग्राहलय, पुणे, महाराष्ट्र में देखा जा सकता है।

गाँव वालों के मनोरंजन के लिये प्राचीनकाल में चित्रकथा की लोकप्रियता थी। टी.वी. सिनेमा आदि के प्रचलन के पश्चात चित्रकथी की लोकप्रियता घटने लगी। फिर भी कई चित्रकारों ने इस कला को मनोरंजक माना है। इस चित्र में एक समकालीन कलाकार की कलाकृति का नमूना चित्रित है। इस चित्र की विषयवस्तु महाकाव्य रामायण से संबंधित है। चित्र के मध्य भाग में गोलाकृति संयोजन में राम सीता की प्रतिमा बनाई गई है। इसके चारों तरफ हिन्दू धर्म की विभिन्न देवियों को दर्शाया गया है। इसी चक्राकार संयोजन की व्याख्या करने के लिये आगे और भी कई चित्र बनाएँ गए हैं। असल में चित्रों की यह शृंखला आगे के घटनाक्रम को खोलते हुए कहानी की व्याख्या करती है।

इस चित्र में रंगों का इस्तेमाल बहुत सीमित है एवं रेखांकन को बहुत महत्व दिया गया है। सरल तथा बहुत ही स्पष्ट रेखाओं के द्वारा इन चित्रों को बनाया गया है।

पाठगत प्रश्न 2.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. चित्रकथी शैली के कलाकार मुख्यत: किस समुदाय से थे-

   (i) ठाकुर (ii) मुगल

   (iii) राजपूत (iv) कायस्थ

2. महाराष्ट्र के उस क्षेत्र का नाम बताइए जहाँ चित्रकला की यह शैली लोकप्रिय है-

(i) कोंकण (ii) बांकुरा

(iii) गाजियाबाद (iv) वीरभूम

2.2 ताड़पत्र चित्र

शीर्षक : ताड़पत्र

स्थान : दक्षिण एशिया

काल/अवधि : पाँचवीं सदी ईसा पूर्व

प्रकार : चित्रकला

संक्षिप्त परिचय

प्राचीन काल से ही ताड़पत्र लिखने हेतु प्रयुक्त किए जाते रहे हैं। कागज़ के प्रचलन से पूर्व ताड़पत्र लेखन का एक सशक्त एवं लोकप्रिय माध्यम थे। दक्षिण एशिया एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया में इनका प्रचलन अधिक रहा है। यहाँ इनका प्रयोग पाँचवी सदी ईसा पूर्व से आरंभ हो चुका था। यहाँ इस

चित्र 2.2: ताड़पत्र चित्र

कार्य हेतु ताड़ की 'बोरास्सस' अथवा 'कोरीफा अम्ब्राक्यूली फैश' प्रजाति की सूखी पत्तियों को धुँए द्वारा संसाधित या विशेष प्रकार से तैयार करके काम में लाया जाता था।

ताड़पत्र पर लिखाई हेतु इसकी सूखी पत्तियों को आयातकार में एक माप में काटा जाता था तथा उन सभी के मध्य में एक छिद्र बना दिया जाता था। हस्तलिखित पाण्डुलिपि के सभी ताड़पत्रों को उनके मध्य बने छिद्र में डोरी पिरोकर बांध दिया जाता था। इस प्रकार तैयार पाण्डुलिपि पोथी कहलाती थी। ताड़पत्र पर लिखी गई ताड़पत्र पोथियों पर चित्रण का कार्य दसवीं शताब्दी ईसवीं से आरंभ हुआ एवं पंद्रहवीं शताब्दी ईसवीं तक यह जैन धर्म संबंधी ग्रंथों में बहुतायत से बनाए गए। इस काल की हस्तचित्रित पोथियां 'जैसलमेर भण्डार' (राजस्थान) नामक जैन संग्रह में देखी जा सकती हैं। इन पोथियों में जैन धर्म संबंधी कथानकों का चित्रण किया गया, जिनमें आकृतियों का रेखांकन काले रंग से किया गया है तथा उनमें नीले, लाल रंग एवं स्वर्ण का प्रयोग बहुतायत से हुआ है।

सामान्य विवरण

ताड़पत्र पर लेखन एवं उन पर चित्रण की यह प्राचीन परंपरा एक अलग रूप में भारत के ओडिशा राज्य में आज भी जीवित है। भुवनेश्वर के स्टेट म्यूजियम में चालीस हज़ार से भी अधिक ताड़पत्र पोथियाँ संग्रहित हैं, जिन्हें उड़िया एवं संस्कृत में लिखा गया है। इनमें देवदासियाँ, कामसूत्र की विभिन्न मुद्राएँ आदि चित्रित हैं। वास्तव में ताड़पत्र पर लेखन अथवा रेखांकन का कार्य लोहे से बने एक विशेष औजार, जिसे स्थानीय भाषा में 'लेखना' कहा जाता है, द्वारा किया जाता है। 'लेखना' एक लंबी मोटी कील के समान होता है, जिसका एक सिरा नुकीला होता है। इसके द्वारा ताड़पत्र पर आकृतियाँ एवं अक्षर उत्कीर्ण किए जाते हैं। ताड़पत्र पर रेखांकन करने हेतु एक सधे एवं दक्ष तथा चित्रांकन में पारंगत हाथ की आवश्यकता होती है। ताड़पत्र पर उत्कीर्ण आकृति को मिटाया या सुधारा नहीं जा सकता। आकृति उत्कीर्ण करने के बाद उस पर काली स्याही लगाई जाती है, जो उत्कीर्ण रेखाओं के मध्य घुसकर उन्हें काला कर देती है। अतिरिक्त स्याही को गीले कपड़े से पौंछकर साफ कर दिया जाता है, क्योंकि ताड़पत्र की सतह चिकनी होती है अत: उस पर स्याही नहीं चिपकती। अत: उसे पौंछ कर साफ़ किया जा सकता है। ताड़पत्र पर किया गया रेखांकन अथवा अक्षरांकन पत्र की सतह को खुरचकर अथवा खोद कर किया जाता है, इसलिए वह स्याही को सोख लेता है। इस तकनीक का पारंपारिक उपयोग ओडिशा के नायकर समुदाय के लोग जो यहाँ ज्योतिष का काम करते हैं, नवजात शिशुओं की जन्मकुंडली अथवा जन्मपत्री बनाने हेतु करते रहे हैं। इन हस्तलिखित जन्मपत्रियों में बनाए गए अनेक प्रकार के रेखांकन, दृष्टांतचित्रों की भूमिका निभाते हैं। क्योंकि ताड़पत्रों की चौड़ाई बहुत कम होती है और चित्रांकन हेतु यह स्थान पर्याप्त नहीं होता इसलिए बड़ी आकृति बनाने हेतु अनेक पत्रों का प्रयोग करना पड़ता है। इस प्रकार एक जन्मकुंडली बनाने में अनेक पत्रों का प्रयोग करना होता है, जिन्हें बाद में सिलाई करके आपस में जोड़ दिया जाता है। सिलाई इस प्रकार की जाती है कि पत्तों को एक पोथी के रूप में बाँधा जा सके।

कालांतर में ताड़पत्रों पर जगन्नाथ उपासना से संबंधित; कृष्णलीला, दशावतार, कालियादमन, कांची अभियान एवं महाभारत, रामायण आदि विषयों पर रेखांकन एवं बहुरंगी चित्रांकन किया जाने लगा।

कृष्ण राधा के रासलीला का चित्रांकन विशेष रूप से ओडिशा के पुरी एवं भुवनेश्वर नगरों में बहुप्रचलित विषय हैं, जो पटचित्र बनाने के प्राचीन केंद्र हैं। ये चित्र यहाँ के महाराणा एवं महापात्र समुदाय के पारंपरिक चित्रकार बनाते हैं। सूती कपड़े से तैयार किए गए पट पर बनाए जाने वाले इन चित्रों को ताड़पत्र पर भी बनाया जाने लगा। वर्तमान में ओडीशा के ताड़पत्र चित्र, रेखांकन एवं चित्रांकन का मिश्रित रूप होते हैं। चित्रों में प्रयोग किए जाने वाले रंग पूर्णत: प्राकृतिक होते हैं एवं इन्हें चित्रकार स्वयं ही अपने उपयोग हेतु बना लेते हैं। रंगों को स्थायी बनाने हेतु उनमें गोंद मिलाया जाता है।

आज ओडीशा के पुरी एवं रघुराजपुर ताड़पत्र पर चित्रकारी के प्रमुख केंद्र हैं। यहाँ उच्चकोटि के चित्र तैयार किए जाते हैं।

पाठगत प्रश्न 2.2

1. दुनिया के किस भाग में ताड़पत्रों को लिखने हेतु पहले-पहले काम में लाया गया?
2. लेखन एवं चित्रांकन हेतु ताड़ की किस प्रजाति के पत्तों का प्रयोग किया जाता है?
3. ताड़पत्तों पर जैनधर्म संबंधी चित्रित पोथियाँ किस कालखण्ड में तैयार की गई?

क्रियाकलाप

अपने मोहल्ले से ताड़ के कुछ पत्ते इकट्ठा करें और उन्हें धूप में सुखा लें। अभी आप इस पर पोस्टर रंग से कुछ पेंटिंग बनाएँ और कागज़ में लगाएँ।

2.3 गोंड चित्रकला

शीर्षक : **गोंड चित्रकला**
स्थान : **मध्य प्रदेश**
अवधि : **मध्यकाल का अंतिम चरण**
प्रकार : **चित्रकला**

संक्षिप्त परिचय

गोंड भारत के सबसे बड़े आदिवासी समुदायों में से एक हैं। इनकी आबादी मुख्यत: मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में है। गोंड आदिवासियों की लगभग सत्तर से भी अधिक उपजातियाँ हैं और ये सामान्यत: कृषक होते हैं। मध्यकाल के अंतिम चरण में पूर्वी मध्यप्रदेश के कुछ हिस्सों पर गोंड राजाओं ने राज्य भी किया। तब यह भूभाग गौण्डवाना कहलता था। द्रविड़ मूल के इन आदिवासियों में गीत-संगीत, नृत्य एवं कथागायन तथा अपने घरों को सुसज्जित करने की सुदीर्घ एवं पुष्ट परंपरा है। प्रसिद्ध शोधकर्ता डॉ वैरियर एल्विन ने गोंड समाज एवं उनकी कलापरंपराओं पर गहन शोध किया है एवं अपनी पुस्तक 'ट्राइबल आर्ट ऑफ़ मिडिल इंडिया' में इनकी कला के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं।

चित्र 2.3: गोंड चित्रकला

सामान्य विवरण

आदिवासियों में अपने घरों को सजाने की जन्मजात ललक होती है। वे अपने आस-पास उपलब्ध सामग्री; जैसे फूल-पत्ते, हड्डी, विभिन्न रंगों की मिट्टी आदि से यह कार्य करते हैं। गोंड आदिवासीयों में यह प्रवृति प्रमुखता से होती है। वे अपने शरीर पर गोदना चित्र तो बनवाते ही हैं, अपने घरों पर भी अनेक प्रकार से अलंकरण एवं लिपाई-पुताई करते हैं। त्योहारों एवं शुभ अवसरों पर घर-आँगन की दीवारों को गोबर-मिट्टी के गारे से लिपाई के उपरांत सफ़ेद, लाल,

पीली, एवं काली मिट्टी की लिपाई से सुसज्जित किया जाता है, जिसे 'ठींगना' कहा जाता है। दीवार के आधार एवं ऊपरी भाग में दरवाज़े, खिड़कियों एवं आले के चारों ओर इन्हें विशेष तौर पर बनाया जाता है। ठींगना ज्यामितिय पैटर्न होते हैं जो लाल, सफ़ेद, काले एवं पीले रंग की मिट्टी से, चौड़े पट्टों की पुनरावृति से संयोजित किए जाते हैं। यहाँ घरों के मुख्य दरवाज़े के दोनों ओर घोड़ा, हाथी, हवाई जहाज आदि चित्रित किए जाते हैं। दरवाज़े के बाहर चित्रित ये वाहन प्रतिष्ठा का प्रतीक माने जाते हैं। दरवाज़े पर एवं बैठक की दीवारों पर मिट्टी, गोबर एवं धान के भूसे को मिलाकर तैयार किए गए गारे से उभारदार भित्ति अलंकरण बनाए जाते हैं; जिनमें पशु-पक्षी, मानव एवं ज्यामितिय आकृतियां उकेरी जाती हैं। यह परंपरा आज भी मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के समूचे गोंड आदिवासियों में प्रचलन में है। प्रस्तुत चित्र (2.3) में मोर-मोरनी के युगल चित्र को चित्रित किया गया है। रंगों का संयोजन खूबसूरती से किया गया है।

पिछले कुछ वर्षों में कागज़ एवं कैनवास पर जो बहुरंगी गोंड चित्र पोस्टर एवं एक्रायलिक रंगों से गोंड चित्रकारों द्वारा बनाए जा रहे हैं, वे 1980 के दशक में अस्तित्व में आए हैं। मध्यप्रदेश के मण्डला जिले (अब डिण्डोरी जिला) के पाटनगढ़ गाँव के रहने वाले दो प्रधान गोंड चित्रकारों जनगढ़ सिंह श्याम एवं नर्मदा गोंड की सृजनशीलता के परिणामस्वरूप यह नई चित्रण शैली विकसित हुई जिसे शहरी कला जगत मे शीघ्र ही प्रसिद्धी एवं प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई। भोपाल स्थित भारत भवन के तत्कालीन निदेशक जगदीश स्वामीनाथन ने इसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

जनगढ़ सिंह श्याम के बनाए चित्र भारत में ही नहीं समूचे विश्व में गोंड चित्र शैली के नाम से विख्यात हो गए। इन चित्रों की बिक्री बड़े पैमाने पर और ऊँचे दामों में होने से गाँवों के अनेक गोंड युवक-युवतियों ने जनगढ़ सिंह श्याम की शैली का अनुसरण करते हुए चित्रांकन द्वारा जीवकोपार्जन करना आरंभ कर दिया, इस प्रकार गोंड चित्रकला का यह वर्तमान नया रूप प्रचलित हो गया। गोंड चित्रकला की यह नवीन धारा मध्यप्रदेश के मण्डला जिले के गोंड आदिवासियों की नई पीढ़ी में लोकप्रिय है, जो अब उनकी आजीविका का प्रमुख माध्यम बन गई है।

इस नवीन गोंड चित्रकला के चित्रकार कागज़ एवं कैनवास पर अपने देवी-देवताओं, किंवदंतियों एवं कथाओं के अतिरिक्त पेड़ पौधे एवं पशु-पक्षी तथा आदिवासी जीवन की दैनिक गतिविधि यों का चित्रांकन चमकीले एवं शुद्ध रंगों से करते हैं। चित्रित की गई मुख्य आकृतियों को वे पहले सपाट रंगों से भरते हैं, तदुपरांत उस पर अनेक रंगों के बिंदु एवं रेखा खण्डों की पुनरावृति से विभिन्न पैटर्न बनाते हुए अलंकरण करते हैं। इस प्रकार चित्रित आकृतियां बहुत ही आकर्षक प्रतीत होती हैं। इन चित्रों का एक बड़ा संग्रह भारत भवन, भोपाल एवं जनजातीय संग्रहालय, भोपाल में देखा जा सकता है।

पाठगत प्रश्न 2.3

1. गोंड आदिवासी प्रमुख रूप से भारत के किन प्रांतों में रहते हैं?
2. किस विदेशी शोधकर्ता ने पारंपरिक गोंड कला एवं संस्कृति पर गहन शोध किया तथा उस पर कौन-सी प्रसिद्ध पुस्तक लिखी?

3. पारंपरिक गोंड लिपाई को क्या कहते हैं?

4. किन चित्रकारों के प्रयास से गोंड चित्रकला की नवीन धारा विकसित हुई?

2.4 कलमकारी

शीर्षक : कलमकारी
स्थान : आंध्रप्रदेश
समय : प्राचीनकाल
प्रकार : चित्रकला

संक्षिप्त परिचय

कलमकारी वह शिल्प विधा है जिसमें कलम एवं रंगों की सहायता से कपड़ों पर चित्रकारी की जाती है। कभी-कभी यह कार्य ब्लॉक प्रिंटिंग एवं हस्तचित्रण या दोनों के सम्मिश्रण से भी किया जाता है। कलमकारी शब्द फारसी के दो शब्दों से मिलकर बना है, कलम और कारी। कलम का अर्थ है पैन तथा कारी का अर्थ है कार्य। अतः कलमकारी का अर्थ हुआ कलम से किया जाने वाला शिल्पकार्य।

चित्र 2.4: कलमकारी चित्र (गणेश)

वर्तमान में भारत के दक्षिणी भाग में प्रचलित यह शिल्प कला एक समय भारत के अन्य भागों में भी प्रचलन में थी। इस कला का विकास कब और कैसे हुआ इस सम्बंध मे विद्वानों मे मतभेद है। कुछ का मानना है कि इसका विकास मुगलों के भारत आगमन के बाद हुआ तो कुछ इसे एक प्राचीन कला मानते हैं। परंतु इस बात पर सभी सहमत हैं कि मुगलों के संरक्षण में यह कला अपने उत्कर्ष पर पहुंची और कलमकारी कपड़ों का व्यापार सुदूर देशों तक फैला।

आंध्रप्रदेश के श्रीकलाहस्ति नगर में बनाए जाने वाले कलमकारी चित्रों का विकास मंदिरों में हुआ। प्रमुख चित्रों में पट्ट चित्र, मंदिरों की पृष्ठभूमि में बनाए जाने वाले चित्र, रथों में लगाएँ जाने वाले पट्ट चित्र आदि शामिल हैं। इनमें चित्रित किए जाने वाले विषय हिंदु महाकाव्यों; जैसे- रामायण, महाभारत एवं शिवपुराण तथा अन्य कथाओं से लिए जाते थे।

मुस्लिम शासकों के संरक्षण में विकसित मछलीपट्टनम् की कलमकारी शैली में शासकों की रुचियों के अनुरूप अभिप्रायों एवं डिज़ाइनों का व्यापक प्रयोग हुआ। कलमकार, बनाए जाने वाले डिज़ाइन की बाह्य रेखा एवं मुख्य आकृतियाँ लकड़ी के ब्लॉक से छाप लेते थे और महीन विवरण तथा रंग भरने का कार्य कलम से करते थे। नमाज पढ़ने हेतु जनमाज़, शामियानों, दरवाजों के परदों एवं कनातों पर मेहराब डिज़ाइन के साथ पशु-पक्षी आकृतियाँ एवं फूल-पत्तियों के बूटे बनाए जाते थे, जिन्हें मध्य पूर्व के देशों में बेचा जाता था।

ब्रिटिश शासन के दौरान कलमकारी के डिज़ाइन एवं उत्पादों में बड़ा परिवर्तन हुआ अब उन्हें पोशाकों एवं घरेलू उपयोग के कपड़ों, जैसे- परदों, रजाइयों, गिलाफों आदि के लिए बनाया जाने लगा। फूल-पत्तियों के डिज़ाइन मुख्य हो गए।

सामान्य विवरण

आरंभ में कलमकारी केवल कलम द्वारा की जाती थी, परंतु बाद में इसमें ब्लॉक प्रिंटिंग का भी समावेश हो गया। इस प्रकार कलमकारी की दो शैलियाँ बन गई- पहली, कलमकारी शैली, इसमें केवल कलम से चित्रित कलमकारी की जाती थी और मुख्यतः हिन्दू धार्मिक विषयों पर चित्र बनाए जाते थे। दूसरी, मछलीपट्टनम शैली जिसमें ब्लॉक प्रिंटिंग एवं कलम द्वारा चित्रकारी, दोनों के मिश्रण से कपड़े अलंकृत किए जाते थे।

प्रस्तुत कलमकारी चित्र (2.4) श्री कलाहस्ति शैली में बना है, जिसमें चतुर्भुज गणेश को विराजमान दर्शाया गया है। चित्र के चारों ओर आकर्षक हाशिए अंकित किये गए हैं। बाहरी हाशिया अधिक चौड़ा है जिसमें बेल बूटे बने हैं। हाशिये के भीतर पृष्ठभूमि में गहरा पीला रंग भरा गया है। मध्य में गणेश की प्रभावशाली आकृति बनाई गई है, जिसमें उनके चेहरे के चारों ओर प्रभामण्डल में गहरा लाल और लाल भूरा रंग भरा गया है तथा बाहरी बार्डर कमल की पंखड़ियों की पुनरावृत्ति से अलंकृत किया गया है। चतुर्भुज गणेश के हाथों में पद्म, शंख और मोदक है तथा चौथा हाथ अभय मुद्रा में है। उनका चेहरा भावप्रवण तथा शरीर संतुलित चित्रित किया गया है। चित्र में प्राकृतिक रंग तथा वनस्पति रंगों का प्रयोग किया गया है। यहाँ नीले रंग की अनेक आभाओं से चित्र में एक कोमल प्रभाव उत्पन्न किया है।

पाठगत प्रश्न 2.4

1. कलमकारी क्या है इसका यह नाम क्यों पड़ा?
2. कलमकारी की दो शैलियाँ कौन-सी हैं और इनमें क्या अंतर हैं?

क्रियाकलाप

अपने इलाके के किसी पुस्तकालय में जाइए और कलमकारी कला के कुछ चित्र एकत्र करके उनका अध्ययन कीजिए। अब पेन से कोई भी कलमकारी डिज़ाइन बनाइए।

आपने क्या सीखा

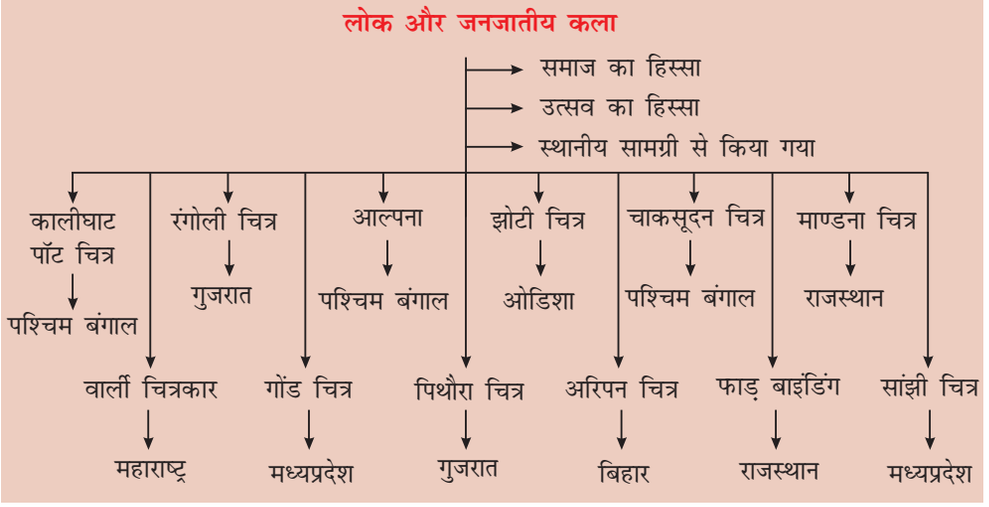

सीखने के प्रतिफल

छात्र द्वारा

- स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री का अन्य कला रूपों को बनाने के लिए प्रयोग।
- कलाकृति बनाने के लिए विभिन्न तकनीकों और रंग सामग्री का प्रयोग।

पाठांत प्रश्न

1. चित्रकथी चित्र क्या हैं, वे कहाँ बनाए जाते हैं?
2. चित्राकथी चित्रों की विषयवस्तु एवं उन्हें बनाने में प्रयुक्त होने वाली सामग्री के बारे में बताइए?
3. चित्रकथी प्रदर्शन कब और कहाँ आयोजित होते हैं?
4. ताड़पत्र पर लेखन कब और कहाँ आरंभ हुआ?
5. ताड़पत्र की किन प्रजातियों का लेखन हेतु प्रयोग होता है तथा यह लेखन एवं रेखांकन किस प्रकार किया जाता है?
6. ताड़पत्रों पर चित्रांकन कब आरंभ हुआ, किस धर्म के ग्रंथ इन पर लिखे गए एवं वे कहाँ संग्रहित हैं?
7. ओडिशा में ताड़पत्र पर चित्रकारी किस समुदाय के चित्रकार करते हैं तथा इनके बनने के प्रमुख केंद्र कौन-से हैं?
8. गोंड आदिवासी भारत के किन प्रांतों में रहते हैं, उनकी परंपरागत लिपाई क्या कहलाती है?
9. किन दो गोंड चित्रकारों के प्रयास से गोंड चित्रकला की नई धारा कब और कहाँ विकसित हुई?
10. गोंड चित्रकला के विकास में किस संस्था ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

2.1

1. (i) ठाकुर
2. (i) कोंकण

2.2

1. दक्षिण एशिया एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया।
2. ताड़ की 'बोरास्सस' अथवा 'कोरीफा अमब्राक्यूलीफैश' प्रजातियाँ।
3. जैन धर्म संबंधी चित्रित पोथियाँ दसवीं से पन्द्रहवीं सदी ईस्वीं में तैयार की गई।

2.3

1. गोंड आदिवासी मुख्यत: मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ राज्यों में रहते हैं।
2. डॉ. वैरियर एल्विन ने, उन्होंनें 'ट्राइबल आर्ट ऑफ़ मिडिल इंडिया' नामक पुस्तक लिखी।

3. पारंपारिक गोंड लिपाई को ठींगाना कहते हैं।

4. जनगढ़ सिंह श्याम एवं नर्मदा गोंड नामक चित्रकारों के प्रयास से।

2.4

1. यह एक कला शैली है। इसे कलम एवं रंगों की सहायता से कपड़ों पर चित्रकारी की जाती है। 'कलम' का अर्थ पैन तथा 'कारी' का अर्थ है कार्य।

2. प्रथम, कलमकारी शैली में केवल कलम से चित्रित की जाती है। दूसरी, मुछलीपट्टनम शैली जिसमें ब्लॉक प्रिंटिंग एवं कलम द्वारा चित्रकारी की जाती है।

शब्दकोश

आंचलिक	:	क्षेत्रीय
घुमक्कड़	:	एक स्थान पर स्थायी रूप से न रहने वाले
कालांतर	:	समय बीतने पर
भित्तिचित्र	:	दीवार पर बनाए जाने वाले चित्र
पाण्डुलिपि	:	हाथ से लिखी मूल पुस्तक
उत्कीर्ण	:	खुरचना अथवा खोदना
प्रवृत्ति	:	आदत
ज्यामितीय	:	ज्यामिति पर आधारित
उकेरना	:	चित्रित करना
मिथकथाएँ	:	प्रचलित विश्वासों पर आधारित कथाएँ

3

कलाकारों और विद्वानों का योगदान

प्रिय शिक्षार्थी, पिछले पाठ में हमने लोक और आदिवासी चित्रकला रूपों के विषय में जाना। इस पाठ में हम विद्वानों और कलाकारों के योगदान के विषय में जानेंगे। भारतीय आदिवासी एवं लोककला को देश एवं विदेश में लोकप्रिय बनाने तथा उसके कलात्मक एवं सांस्कृतिक महत्व से जन-जन को परिचित कराने मे कुछ भारतीय एवं विदेशी विद्वानों का अविस्मरणीय योगदान रहा। विशेष तौर पर 20वीं सदी के आरंभ में डॉ. वैरियर एल्विन, स्टैला क्रेमरिश, कमला देवी चट्टोपाध्याय एवं बाद में पुपुल जयकर, हाकू शाह, राजीव सेठी, जगदीश स्वामीनाथन जैसे विद्वानों के अथक प्रयासों से अनेक भारतीय आदिवासी एवं लोककलाएँ, कला जगत के सामने आई एवं अनेक आदिवासी एवं लोक कलाकार अपनी पारंपरिक कला प्रतिभा के कारण विश्व में प्रसिद्धि पा सके।

पिछले चार दशकों में पारंपरिक आदिवासी एवं लोककलाओं के क्षेत्र में कुछ कलाकारों ने अपने व्यक्तिगत योगदान से इन कलाओं को नई बुलंदियों तक पहुँचाया और उनकी इन विलक्षण प्रतिभा को भारत सरकार एवं अन्य संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया। ऐसे ही कुछ कलाकार हैं- वार्ली चित्रकार जीव्या सोमा माशे, गोंड चित्रकार जनगढ़ सिंह श्याम, भील चितेरी भूरी बाई एवं लाडो बाई, राठवा पिठौरा चित्रकार प्रेश भाई राठवा, पटुआ चित्रकार गौरी देवी, फड़ चित्रकार श्रीलाल जोशी और शान्तिलाल जोशी, मधुबनी चित्रकार सीता देवी और गंगा देवी आदि।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- भारतीय आदिवासी एवं लोककला को विश्व पटल पर लाने हेतु किन विद्वानों एवं कलाकारों का योगदान स्पष्ट कर सकेंगे;
- उन विदेशी विद्वानों का परिचय प्रस्तुत कर पायेंगे जिन्होंने भारतीय आदिवासी एवं लोककला को प्रोत्साहन दिया;
- उन भारतीय विद्वानों के बारे में परिचर्चा कर सकेंगे, जिन्होंने आदिवासी एवं लोककला के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई;

- उन आदिवासी एवं लोक कलाकारों के योगदान से परिचित होंगे, जिन्होंने विश्व कला जगत में अपनी छाप छोड़ी;
- विश्व कला जगत में भारतीय आदिवासी एवं लोककला के महत्त्व पर चर्चा कर सकेंगे।

3.1 स्टैला क्रेमरिश (1896 से 1993)

प्रिय शिक्षार्थी, अब हम लोककला के क्षेत्र के कुछ विद्वानों और कलाकारों के विषय में जानेंगे।

शीर्षक : स्टैला क्रेमरिश
जन्मस्थान : ऑस्ट्रिया
समय : 1896 से 1993
योगदान : भारतीय कला एवं लोककला

संक्षिप्त परिचय

स्टैला क्रेमरिश 1896-1993: स्टैला क्रेमरिश मूलरूप से एक ऑस्ट्रियाई कला इतिहासकार थी जो भारतीय कला एवं लोककला पर शोध के लिए विख्यात हुईं। 1921 में भारतवर्ष में स्वदेश प्रेम एवं भारतीयता की लहर जागृत हो गई थी एवं विदेशी कला, विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आन्दोलन प्रारंभ हो गया। उस समय रबीन्द्रनाथ टैगोर ने इन्हें शान्तिनिकेतन कला भवन में कला इतिहास के अध्यापन हेतु आमन्त्रित किया। अपने शिक्षण काल में इनका परिचय भारतीय कला एवं लोककला से हुआ तथा इनकी कला विशेषताओं ने इन्हें आकृष्ट किया। इनसे प्रभावित होकर इन्होंने कई विख्यात पुस्तकों की रचना की।

चित्र 3.1: स्टैल क्रेमरिश

सामान्य विवरण

स्टैला क्रेमरिश ने भारतीय कलाकारों एवं कला के अध्ययनकताओं को यूरोप में हो रहे कला आंदोलनों प्रभाववाद, उक्रार प्रभाववाद और धनवाद से परिचित कराया। इनसे भारतीय अब तक अपरिचित थे। उन्होंने छात्रों को बताया कि एक कलाकृति को कैसे देखा जाए, कैसे उसकी विषयवस्तु और संयोजन को परखा जाए। सन 1947 में विश्व भारती में उनको देशकोत्तम सम्मान से एवं 1982 में भारत सरकार ने उन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया। उन्होंने दक्षिण एशियाई कलाकृतियों का एक महत्वपूर्ण संग्रह किया और 1978 में 'अननोन इंडिया' नामक प्रसिद्ध प्रदर्शनी फिलेडेल्फिया म्यूज़ियम ऑफ़ आर्ट, अमेरिका में आयोजित की। इस प्रदर्शनी में भारतीय राजसी एवं आम जीवन में प्रचलित कला वस्तुओं के माध्यम से भारतीय संस्कृति को प्रस्तुत किया गया। इस प्रदर्शनी ने पहली बार पश्चिमी जगत का ध्यान भारतीय देशज कलाओं की ओर खींचा। उनके द्वारा लिखी गई महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं- 'एक्सप्लोरिंग इंडियाज सैक्रेड आर्ट', 'द हिंदू टेंपल', 'अननोन इंडिया', 'रिचुअल आर्ट इन ट्राइब', 'विलेज' आदि।

पाठगत प्रश्न 3.1

1. स्टैला क्रेमरिश कहाँ के कला इतिहास की विशेषज्ञ थीं?
2. श्री रबीन्द्रनाथ टैगोर ने स्टैला क्रेमरिश को 1921 में कहाँ अध्यापन हेतु आमंत्रित किया?
3. स्टैला क्रेमरिश को भारत सरकार ने किस सम्मान से सम्मानित किया?
4. स्टैला क्रेमरिश द्वारा लिखी महत्वपूर्ण पुस्तकों के नाम लिखिए?

3.2 डॉ. वैरियर एल्विन (29 अगस्त 1902 से 22 फरवरी 1964)

शीर्षक : **डॉ. वैरियर एल्विन**

स्थान : **इंगलैंड**

समय : **29 अगस्त 1902 से 22 फरवरी 1964**

योगदान : **भारतीय आदिवासी कला एवं संस्कृति**

संक्षिप्त परिचय

डॉ. वैरियर एल्विन इंगलैंड के एक मानव विज्ञानी थे। वे भारत में ईसाई मिशनरी के रूप में आए थे, परंतु भारतीय समाज की सरलता एवं धार्मिक परंपराओं ने उन्हें अपनी ओर आकृष्ट किया। वे महात्मा गांधी के अनुयायी बन गए। इन्होंने मध्य भारत के बैगा एवं गोंड तथा मध्यप्रदेश और उड़ीसा के आदिवासियों की लोककला एवं लोक परंपरा का अध्ययन किया। इनकी इन्हीं विशेषताओं

के फलस्वरूप भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने इन्हें भारत के उत्तरपूर्वी आदिवासी मामलों का सलाहकार नियुक्त किया। आदिवासी कला संस्कृति पर इन्होंने कई महत्वपूर्ण किताबें लिखीं।

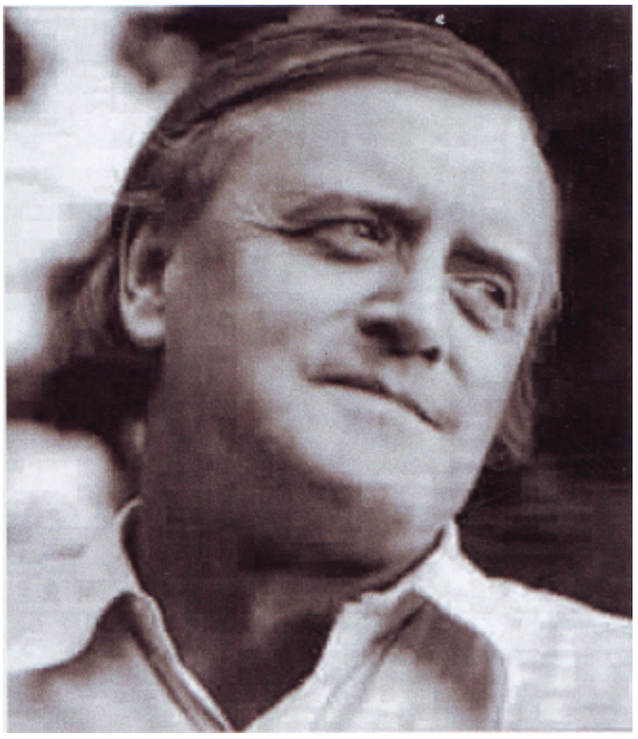

चित्र 3.2: डॉ. वैरियर एल्विन

सामान्य परिचय

डॉ. वैरियर एल्विन ने मध्य भारत के बैगा एवं गोंड तथा उत्तर पूर्वी भारत एवं उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश के अनेक आदिवासियों एवं उनकी पारंपरिक कलाओं पर शोधकार्य किया, जिसके लिए उन्हें विशेष रूप से जाना जाता है। उन्हें भारतीय आदिवासी कला एवं संस्कृति पर विशेषज्ञ माना जाता है। उनकी लिखी पुस्तक 'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ़ वैरियर एल्विन' को 1975 में साहित्य अकादमी सम्मान दिया गया।

आदिवासी संस्कृति एवं कलाओं पर 'सांग्स ऑफ़ दि फोरेस्ट', 'दि अगारिया', 'दि एबोरीजनल्स', 'फोक सांग्स ऑफ़ मैकल हिल्स', 'फोक सांग्स ऑफ़ छत्तीसगढ़', 'दि मुरिया एण्ड देयर घोटुल', 'दि ट्राइबल आर्ट ऑफ़ मिडिल इंडिया', 'ट्राइबल मिथस् ऑफ़ उड़ीसा', 'दि आर्ट ऑफ़ दि नार्थ-ईस्ट फ्रंटियर ऑफ़ इंडिया', 'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ़ वैरियर एल्विन', फोक पेटिंस ऑफ़ इंडिया', 'द बैगा' आदि उनकी कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं, जिनसे भारतीय आदिवासी संस्कृति एवं कला की गहरी जानकारी मिलती है और जो इस विषय पर किए गए आरंभिक शोधकार्यों में से एक हैं।

पाठगत प्रश्न 3.2

1. डॉ. वैरियर एल्विन को किस कला संस्कृति का विशेषज्ञ माना जाता है?
2. डॉ. वैरियर एल्विन ने मध्य भारत के किन आदिवासियों की कला-संस्कृति पर कार्य किया?
3. डॉ. वैरियर एल्विन को किस पुस्तक के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला?

क्रियाकलाप

आदिवासी तथा लोककला के प्रति डॉ. वैरियर एल्विन के योगदान के विषय में जानने के लिये निकटतम पुस्तकालय जाइए। भारतीय आदिवासी और ग्रामीण संस्कृति पर लिखी उनकी किसी एक पुस्तक पर समीक्षा लिखिए।

.....

.....

.....

.....

3.3 श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय

शीर्षक : **श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय**

जन्म स्थान : **मंगलूरू, कर्नाटक**

समय : **3 अप्रैल 1903 से 29 अक्तूबर 1988**

योगदान : **भारतीय लोककलाओं के प्रति लोगों का आकर्षण जगाना**

संक्षिप्त परिचय

श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय 20 वर्ष की अल्प आयु में महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन से प्रभावित होकर 1923 में सेवादल की महिला शाखा की प्रमुख बनीं। भारतीय लोककला, शिल्पकला, नाट्य एवं अन्य पारंपरिक कलाओं के प्रति उनके आकर्षण ने उनका ध्यान इन क्षेत्रों की ओर खींचा। इसलिए वे इन क्षेत्रों में अपना योगदान दे पाई। इन्होंने भारतीय लोक कलाओं के प्रति लोगों में आकर्षण जगाने के लिए कई विश्वस्तरीय किताबों की रचना की।

सामान्य परिचय

पद्म विभूषण, पद्म भूषण एवं मैगसेसे पुरस्कारों से सम्मानित कमला देवी चट्टोपाध्याय स्वतंत्र भारत की अत्यंत सम्मानित विदुषी हैं जो न केवल स्वतंत्रता सेनानी और समाज सुधारक थीं, बल्कि

उन्होंने भारतीय पारंपारिक शिल्प कलाओं के पुनर्जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई एवं महिला सशक्तीकरण एवं उनके सामाजिक और आर्थिक उन्नयन हेतु भारत में सहकारिता आन्दोलन की नींव डाली।

चित्र 3.3: श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय

उनके प्रयासों से ही नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा, संगीत नाटक अकादेमी, सेन्ट्रल कॉटेज इंडस्ट्रीज इम्पोरियम तथा क्राफ्टस कौंसिल ऑफ़ इंडिया की स्थापना हो सकी। उनके अथक प्रयासों से ही 200 वर्षों के विदेशी शासन में जर्जर हो चुकी भारतीय शिल्प परंपरा के पुनर्जीवन का कार्य आरंभ हो सका।

देश की आजादी के उपरांत उन्होंने देश में शिल्प संग्रहालयों की एक श्रृंखला स्थापित की जिसमें दिल्ली का नाट्य शिल्प संग्रहालय प्रमुख है। उन्होंने परम्परिक शिल्पियों हेतु राष्ट्रीय पुरस्कारों का आरंभ किया। उनके प्रयासों से ऑल इंडिया हैण्डीक्राफ्ट्स बोर्ड की स्थापना हुई और वे उसकी प्रथम अध्यक्ष बनाई गईं। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं; जिसमें- 'दी क्राफ्टस ऑफ़ इंडिया', 'इंडियन कारपेट एण्ड फ्लोर कवरिंग्स', 'इंडियन एम्ब्रायडरी', 'इंडियाज क्राफ्ट ट्रेडीशन', 'इंडियन हैण्डीक्राफ्ट्स', 'ट्रेडीशन ऑफ़ इंडियन फोक डांस' एवं 'द ग्लोरी ऑफ़ इंडियन हैण्डीक्राफ्टस' प्रमुख हैं।

पाठगत प्रश्न 3.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकरा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. कमला देवी चट्टोपाध्याय का जन्म स्थान है-

   (i) मंगलूरू (कर्नाटक) (ii) उदयपुर (राजस्थान)

   (iii) पुरूलिया (पश्चिम बंगाल) (iv) लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

2. कमला देवी चट्टोपाध्याय की लिखी पुस्तक का नाम है-

   (i) क्रॉफ्ट ऑफ़ इण्डिया (ii) इंडियन आर्ट

   (iii) इंडियन म्यूजिक (iv) ड्राइंग एण्ड पेंटिंग

3.4 श्रीमती पुपुल जयकर

शीर्षक : श्रीमती पुपुल जयकर
जन्म स्थान : इटावा, उत्तर प्रदेश
समय : 11 सितंबर 1915 से 29 मार्च 1997
योगदान : भारतीय पारंपरिक एवं ग्रामीण कला

संक्षिप्त परिचय

श्रीमती पुपुल जयकर का जन्म एक गुजराती ब्राह्मण परिवार में हुआ। एक गुजराती ब्राह्मण परिवार में जन्मी पुपुल जयकर की पहचान एक ऐसे संस्कृतिकर्मी एवं लेखक के रूप में है, जिन्होंने भारतीय पारंपरिक एवं ग्रामीण कलाओं, विशेष रूप से हथकरघा एवं हस्तकलाओं के पुनर्जीवन के लिए कार्य किया।

सामान्य परिचय

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में पारंपरिक आदिवासी, लोककलाओं एवं हस्तशिल्प के पुनरूद्धार हेतु अपने अथक प्रयासों के लिए श्रीमती पुपुल जयकर का योगदान अविस्मरणीय है। उन्होंने पारंपरिक भारतीय कलाओं को पश्चिमी जगत में लोकप्रिय बनाने हेतु 1980 के दशक में फ्रांस, अमेरिका और जापान में भारत महोत्सव की एकशृंखला आयोजित कराई जो अत्यधिक प्रभावशाली रही।

पद्म भूषण से सम्मानित श्रीमती पुपुल जयकर तत्कालीन भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी एवं राजीव गाँधी की सांस्कृतिक सलाहकार रहीं और लगभग 40 वर्षों तक देश के सांस्कृतिक जगत को अपने विचारों एवं कार्यों से लाभान्वित किया। उन्होंने मिथिला (मधुबनी) चित्रों के पुनरुद्धार; राष्ट्रीय हस्तशिल्प एवं हथकरघा संग्रहालय, इंटैक; इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कलाकेंद्र और राष्ट्रीय फैशन प्रोद्योगिकी संस्थान आदि की स्थपना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने भारतीय पारंपरिक कलाओं एवं हस्तशिल्प पर अनेक पुस्तकें लिखीं जिनमें 'दि अर्दन ड्रम्स', 'दि अर्थ मदर' एवं 'टैक्सटाइल्स एण्ड एम्ब्रायडरीज़ ऑफ़ इंडिया' प्रमुख हैं।

चित्र 3.4: श्रीमती पुपुल जयकर

पाठगत प्रश्न 3.4

1. श्रीमती पुपुल जयकर ने विदेशों मे भारतीय पारंपरिक कलाओं को लोकप्रिय बनाने हेतु क्या किया?
2. श्रीमती पुपुल जयकर का जन्म स्थान कहाँ है?
3. श्रीमती पुपुल जयकर ने किस संग्रहालय की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई?
4. श्रीमती पुपुल जयकर की लिखी दो प्रमुख पुस्तकों के नाम लिखिए।

3.5 श्रीमती सीता देवी

शीर्षक : श्रीमती सीता देवी
जन्म स्थान : मधुबनी
समय : 1914 से 2005
योगदान : मधुबनी चित्र

संक्षिप्त परिचय

सन् 1914 में बिहार के वर्तमान मधुबनी जिले में जन्मी सीता देवी, मधुबनी शैली की उन महान चित्रकारों में अग्रणीय मानी जाती हैं, जिन्होंने इस लोककला को गाँव की दीवारों से उतारकर कागज़ों पर बनाया और अपनी विलक्षण प्रतिभा से उन्हें नए आयाम दिए। उनकी कलात्मक प्रतिभा को सम्मानित करने हेतु 1969 में बिहार सरकार ने उन्हें हस्तशिल्प का राज्यस्तरीय पुरस्कार, 1975 में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय पुरस्कार, 1981 में पद्मश्री तथा 1984 में बिहार राज्य सरकार द्वारा बिहार रत्न सम्मान प्रदान किया। सीता देवी को अपने गाँव जितवारपुर में जगत माँ का दर्जा हासिल था। उन्होंने लगभग 1000 लोगों को मधुबनी चित्र बनाने की कला के गुर सिखाए और प्रोत्साहित किया। उनके ही प्रयासों से इस गाँव में प्राथमिक विद्यालय आरंभ हुआ और गाँव तक पक्की सड़क का निर्माण हो सका।

चित्र 3.5: श्रीमती सीता देवी

सामान्य परिचय

सीता देवी के बनाए चित्रों के प्रशंसकों में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ राजेन्द्र प्रसाद के साथ साथ लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा गाँधी, बाबू जगजीवन राम एवं ललित नारायण मिश्र जैसे अग्रणी नेता एवं बुद्धिजीवी सम्मिलित थे।

सीता देवी के कागज़ पर बनाए चित्रों में अधिकांशत: चित्रों का हाशिया सपाट लाल या गुलाबी रंग से अंकित किया गया है तथा हाशिए के ऊपर दोनों कोनों को एक दरवाज़े की भांति सजाया गया है। चित्र के मध्य में मुख्य चरित्र बहुत ही सरल ढंग से अंकित किया गया है। पृष्ठभूमि में वे फूल-पत्तियों की लता या बूटों से मोहक सज्जा करती थीं, जिनके मध्य पक्षी आकृतियाँ

बहुत ही जीवंत दिखाई देती हैं। वे चरित्रों का चेहरा सुस्पष्ट और आँखें विशाल चित्रित करती थीं। बाद में उनके बनाए चित्रों में अधिक विवरणात्मकता देखने को मिलती है। प्रस्तुत चित्र अर्द्धनारीश्वर उनके द्वारा बाद में बनाए गए महत्वपूर्ण चित्रों में से एक है। मिथिला में भगवती गौरी की शक्ति के रूप में उपासना की एक सुदीर्घ परंपरा है। शिव-पार्वती यहाँ आदर्श दम्पती के प्रतीक हैं। सीता देवी को इनकी उपासना और रूपों का पर्याप्त ज्ञान था। उन्होंने भगवती गौरी और महादेव के सर्वोच्च रूपों में से एक अर्द्धनारीश्वर का बहुत की प्रभावशाली चित्रांकन किया है। चित्र में लाल, नारंगी, केसरी-पीला, हल्का काला रंग और गहरा हरा रंग प्रयुक्त किया गया है। काले रंग का रेखांकन सादगी भरा परंतु संयोजित है। हाशिए में सरल पुष्पलता बनाई गई है। समूचा ध्यान आकृतियों पर दिया गया है।

पाठगत प्रश्न 3.5

1. सीता देवी का जन्म कहाँ हुआ?
2. सीता देवी भारत की किस लोकचित्र शैली की चित्रकार थीं?
3. सीता देवी को मधुबनी कला में योगदान के लिए कौन-से सम्मान प्राप्त हुए?

3.6 गुरप्पा चेट्टी

शीर्षक : **गुरप्पा चेट्टी**

जन्म स्थान : **श्रीकालाहस्ती, आंध्र प्रदेश**

समय : **1937**

योगदान : **कलमकारी कला**

संक्षिप्त परिचय

जाने माने कलमकारी कलाकार गुरप्पा चेट्टी का जन्म 1937 में श्रीकालाहस्ती, आंध्र प्रदेश के एक पारंपरिक कलाकार परिवार में हुआ था। बचपन से ही गुरप्पा चेट्टी ने कमलकारी के गुर सीखना आरम्भ कर दिया था। उन्होंने अपने निष्ठापूर्ण एवं कठोर अभ्यास से इस तकनीक का गहराई से अध्ययन किया और उसमें अभूतपूर्व कुशलता प्राप्त की। कलमकारी में उन्होंने प्रमाणिक और पुराने डिज़ाइनों का ज्ञान प्राप्त किया और परंपरागत सौंदर्यबोध को समझकर अपनी स्वयं की एक विशिष्ट निरूपण शैली विकसित की। वे मानते हैं कि यह कला अगली पीढ़ियों तक पहुँचाने की भूमिका पुरानी पीढ़ी के श्रेष्ठ कलमकारों की है, अतः वे इस दिशा में प्रयासरत रहते हैं। उन्होंने इस विषय पर तेलुगू एवं अंग्रेज़ी में अनेक पुस्तके लिखीं हैं। तेलुगु में उन्होंने भगवत मणीमाला, व्राथ पानी कलमकारी, भारत रत्नमाला तथा अंग्रेज़ी में 'पुष्पालु' नाम पुस्तक लिखी है। उन्होंने विभिन्न संस्थाओं के साथ जन-साधारण के लिए कलमकारी शिविर आयोजित किए हैं। देश-विदेश में उन्होंने कलमकारी शिल्प कौशल प्रदर्शन कार्यक्रम भी किए हैं।

चित्र 3.6: गुरप्पा चेट्टी

चित्र 3.7

सामान्य परिचय

उनकी कला साधना और कलमकारी के प्रचार-प्रसार में उनके अमूल्य योगदान हेतु उन्हें भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय पुरस्कार 1976, शिल्पगुरू सम्मान 2002, तुलसी सम्मान मध्य प्रदेश शासन, 2008 एवं हाल ही में भारत सरकार द्वारा पद्मश्री से सम्मानित किया गया है।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के समय कलमकारी कला विलुप्त होने की कगार पर थी, परंतु गुरप्पा चेट्टी जैसे कल्पनाशील एवं जुझारू कलाकारों के प्रयास से यह कला पुनर्जीवन प्राप्त कर सकी। गुरप्पा चेट्टी ने न केवल कलमकारी तकनीक एवं चित्रण शैली में अनेक समसामयिक परिवर्तन किए, वरन हस्तचित्रित एवं हस्तरंजित कलमकारी कपड़ों को अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में स्थान दिलाया। कलमकारी वस्त्रों की पहचान पर्यावरण के अनुकूल भी है। इस प्रकार उन्होंने मृतप्राय होती कलमकारी को एक नया जीवन देने के कार्य में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

पाठगत प्रश्न 3.6

1. गुरप्पा चेट्टी किस चित्र शैली के प्रसिद्ध चित्रकार हैं?
2. गुरप्पा चेट्टी का जन्म कब और कहाँ हुआ था?
3. कलमकारी में योगदान हेतु भारत सरकार ने गुरप्पा चेट्टी को किस प्रकार सम्मानित किया?
4. गुरप्पा चेट्टी की लिखी पुस्तकों के नाम लिखिए।

3.7 जीव्या सोमा मशे

शीर्षक : जीव्या सोमा मशे

जन्म स्थान : ठाणे जिला, महाराष्ट्र

समय : 1934

योगदान : आदिवासी कला

संक्षिप्त परिचय

1934 में महाराष्ट्र के ठाणे जिले के धामन गाँव में जन्मे जीव्या सोमा मशे एक ऐसी आदिवासी कला परंपरा के चित्रकार हैं, जो केवल स्त्रियों द्वारा की जाती थी। परंतु प्रोत्साहन से आरंभ हुए उनके चित्रकर्म ने न केवल उन्हें, बल्कि वार्ली आदिवासी चित्रकला को एक नई बुलंदी तक पहुँचा दिया। 1975 में मुम्बई की कैमोल्ड आर्ट गैलरी में वार्ली चित्रों की प्रदर्शनी का आयोजन हुआ। वह जीव्या सोमा मशे का भारतीय कलाजगत से पहला परिचय था। आज वे भारतीय आदिवासी कला के लिविंग लीजैण्ड हैं। आपने विख्यात लोक कलाकार जीव्या सोमा मशे की कुछ कलाकृतियां अवश्य देखी होंगी। आइए, इनके विषय में हम विस्तार में जानें।

सामान्य विवरण

जीव्या सोमा मशे पहले भारतीय वार्ली आदिवासी चित्रकार हैं जिन्हें 1976 में राष्ट्रीय पुरस्कार, 2001 में शिल्पगुरू पुरस्कार, 2009 में नीदरलैण्ड का प्रिंस क्लाउस पुरस्कार तथा 2011 में पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। वे ऐसे पहले भारतीय आदिवासी चित्रकार है जिनके बनाए चित्रों की प्रदर्शनी भारत की सभी प्रतिष्ठित आर्ट गैलरीज के साथ-साथ विदेशों की अनेक

महत्वपूर्ण आर्ट गैलरीज; जैसे- पैलेस डी मैंटोन, पेरिस में 1976; पॉम्पेदू सेंटर, पेरिस में 1989 एवं 2003; डू सेल्डोर्फ जर्मनी, मिलान इटली में 2004; अमेरिका में 2006 एवं पेरिस में 2007 में आयोजित की गई।

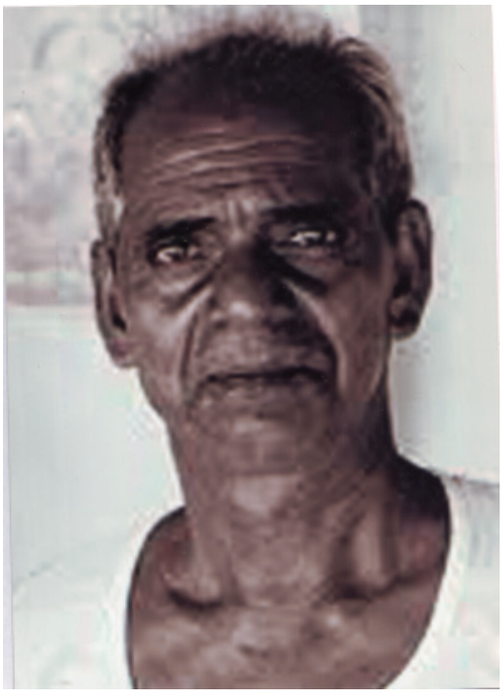

चित्र 3.8: जीव्या सोमा मशे

चित्र 3.9: जीव्या सोमा मशे द्वारा की गई वार्ली चित्र

नीदरलैण्ड में मिले प्रिंस क्लाउस पुरस्कार की प्रशस्ति में कहा गया कि जीव्या सोमा मशे को यह सम्मान एक ऐसी कला भाषा की सृजनात्मक पुनर्खोज के लिए दिया जा रहा है, जो विलुप्त हो रही है। उन्होंने प्रकृति और संस्कृति के मध्य सामंजस्य के वार्ली दर्शन को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया और ज्ञान के इस स्थानीय रूप के समकालीन औचित्य को दर्शाया है। इस प्रकार उन्होंने आदिवासियों एव उनकी कला-संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

पाठगत प्रश्न 3.7

सही उत्तर पर निशान लगाए।

1. जीव्या सोमा मशे किस आदिवासी चित्र शैली के चित्रकार हैं?

   (i) कलमकारी (ii) मधुबनी

   (iii) वार्ली चित्र (iv) अमूर्त

2. जीव्या सोमा मशे का जन्म कब और कहाँ हुआ था?

   (i) महाराष्ट्र, 1934 (ii) पंजाब, 1950

   (iii) उडीशा, 1940 (iv) बिहार, 1955

3.8 जनगढ़ सिंह श्याम

प्रिय विद्यार्थियों, आपने भारत की लोक और आदिवासी कलाओं की कुछ हस्तियों के बारे में जाना। अब हम गोंड कलाकार जनगढ़ सिंह श्याम के बारे में जानेंगे।

शीर्षक : जनगढ़ सिंह श्याम
जन्म स्थान : मध्यप्रदेश
समय : 1960 से 2001
योगदान : गोंड आदिवासी चित्रकला

संक्षिप्त परिचय

मध्य प्रदेश के मण्डला जिले के पाटनगढ़ गाँव में 1960 में जन्मे जनगढ़ सिंह श्याम बहुमुखी प्रतिभा के धनी एवं विलक्षण आदिवासी चित्रकार थे। वे एक अच्छे चित्रकार, मूर्तिकार, भित्ति चित्रकार, बांसुरीवादक और गायक तो थे ही बाद में उन्होंने स्क्रीन प्रिंट लिथोग्राफ़ी भी सीखी और अनेक प्रिंट तैयार किए।

गोंड आदिवासियों की उपशाखा प्रधान आदिवासियों के परिवार में जन्मे जनगढ़ आदिवासी दंतकथाओं का भण्डार थे। 1982 में प्रसिद्ध चित्रकार जगदीश स्वामीनाथन ने उनकी प्रतिभा को पहचाना और चित्रकरी हेतु प्रोत्साहित किया। अगले कुछ वर्षों में जनगढ़ सिंह श्याम ने अपने परंपरागत आदिवासी सौंदर्यबोध तथा विश्व दर्शन के समन्वय से जो चित्र शैली विकसित की उसने गोंड आदिवासी

कला में एक नये अध्याय को जन्म दिया। कुछ लेखकों ने उनकी इस नवविकसित चित्रण शैली को जनगढ़ कलम का नाम दिया।

चित्र 3.10: जनगढ़ सिंह श्याम

चित्र 3.11: जनगढ़ सिंह श्याम द्वारा बनाया गया गोंड चित्र

सामान्य विवरण

वास्तव में आज जो मध्य प्रदेश के गौण्ड आदिवासी कलाकार चित्र बना रहे हैं, वे जनगढ़ सिंह श्याम द्वारा विकसित चित्रण शैली का विस्तार और अनुकरण है। इस प्रकार जनगढ़ ने गौण्ड आदिवासी कला को न केवल समकालीन कलाजगत में एक नई पहचान दिलाई बल्कि परंपरागत कलाओं में कलाकार की निजी सृजनात्मकता के महत्व को भी रेखांकित किया। जनगढ़ सिंह श्याम उस आदिवासी समुदाय से थे जिनमें भित्ति चित्रण और मिट्टी के काम से घर की दीवारों को सजाने की समृद्ध परंपरा है। परंतु वे अपने देवी देवताओं के मूर्तरूप को अनगढ़ पत्थरों में ही देखते हैं। जनगढ़ ऐसे पहले परधान-गौण्ड चित्रकार बने जिन्होंने अपनी समुदायगत किंवदंतियों में वर्णित देवी-देवताओं को अपनी विलक्षण कल्पनाशीलता से चित्र रूप दिया। उन्हीं के बनाए चित्रों के माध्यम से अनेक अनसुने ओर अनदेखे आदिवासी देवी-देवताओं से दर्शकों का पहला परिचय हुआ। जनगढ़ ने अपनी कलात्मक प्रतिभा से एक निजी चित्रभाषा का विकास किया। वे चित्रों में एक या कुछ आकृतियों का समूह बहुत की सरलता से रखते थे परंतु इन आकृतियों को जिस प्रकार चमकीले रंगों में समरसता से चित्रित करते थे वह विलक्षण है। आकृति में पहले सपाट रंग की पृष्टभूमि तैयार कर वे उस पर विविध रंगों की बुन्दकियों से अद्‌भुत प्रभाव उत्पन्न करने में सफलता प्राप्त करते थे।

जनगढ़ के चित्रों के विषय पशु-पक्षी और आदिवासी देवी-देवता रहे। जनगढ़ के ये चित्र अनियमित रूप से बनाए गए हैं। जनगढ़ सिंह श्याम को उनके गोंड आदिवासी कला के विकास में योगदान हेतु मध्य प्रदेश शासन द्वारा 1985 में शिखर सम्मान दिया गया। उन्होंने नवनिर्मित मध्य प्रदेश विध ान सभा भवन में बृहदाकार भित्ति चित्र बनाए। उनके चित्रों को अमरीका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी एवं जापान में प्रदर्शित किया गया।

प्रस्तुत चित्र (3.11) जनगढ़ सिंह श्याम द्वारा बनाया गया एक बारहसिंघे का चित्र है, जिसमें बाह्य आकृति के अतिरिक्त वास्तविक बारहसिंघे से कोई साम्य नहीं है। रंगों के प्रति जिस काल्पनिकता का प्रयोग इस चित्र में किया गया है वह अद्वितीय है।

पाठगत प्रश्न 3.8

1. जनगढ़ सिंह श्याम किस आदिवासी शैली के चित्रकार थे?
2. जनगढ़ सिंह श्याम का जन्म कब और कहाँ हुआ?
3. जनगढ़ सिंह श्याम की कला प्रतिभा को सर्वप्रथम किसने पहचाना और कलाकर्म हेतु प्रोत्साहन दिया?
4. कुछ लेखकों ने जनगढ़ सिंह श्याम द्वारा विकसित चित्र शैली को क्या नाम दिया?

आपने क्या सीखा

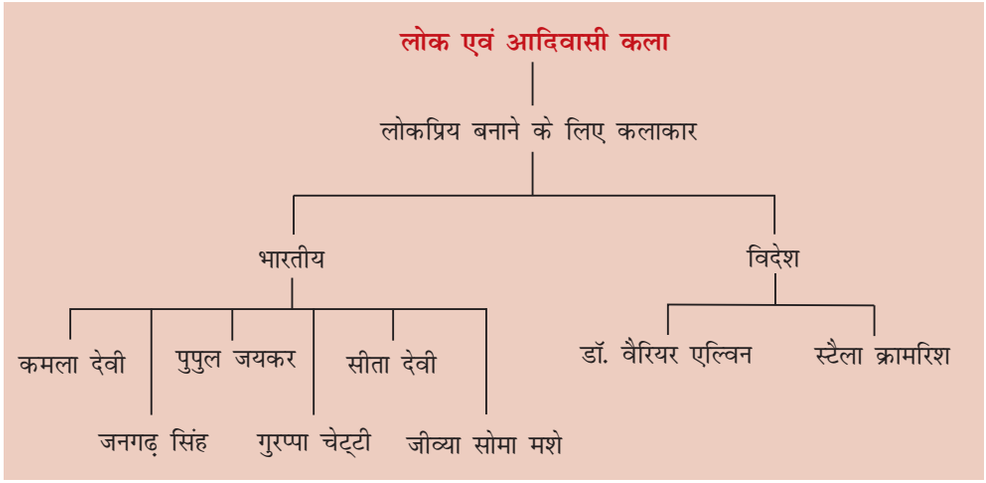

सीखने के प्रतिफल

विद्यार्थियों द्वारा

- विभिन्न कलाकृतियाँ निर्मित करने के लिये विख्यात कलाकारों की विधियों और तत्त्वों का प्रयोग किया जाता है।
- उनके संयोजन में रंग, बनावट, नमूनों, एकता और विविधता का प्रयोग किया जाता है।

पाठांत प्रश्न

1. भारतीय आदिवासी एवं लोककलाओं के विकास एवं प्रचार-प्रसार में किन विद्वानों एवं कलाकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा? उनकी एक सूची तैयार कीजिए।
2. डॉ. वैरियर एल्विन द्वारा आदिवासी संस्कृति पर लिखी पुस्तकों के नाम की सूची बनाइए।
3. स्टैला क्रेमरिश द्वारा 1968 में आयोजित की गई प्रदर्शनी के विषय में टिप्पणी लिखिए।
4. कमला देवी चट्टोपाध्याय ने देशज शिल्प के उत्थान के लिए क्या कदम उठाए?
5. लोककलाओं के उत्थान हेतु श्रीमती पुपुल जयकर ने क्या-क्या के प्रयास किए?
6. मधुबनी शैली की प्रसिद्ध चित्रकार सीता देवी की कला का वर्णन कीजिए।
7. प्रसिद्ध वार्ली चित्रकार जीव्या सोमा मशे की उपलब्धियों का उल्लेख कीजिए।
8. जनगढ़ सिंह श्याम किस आदिवासी चित्र शैली के चित्रकार थे, उनकी बहुमुखी कला प्रतिभा पर प्रकाश डालिए।
9. प्रसिद्ध कलमकारी चित्रकार गुरप्पा चेट्टी ने कौन-सी पुस्तकें लिखी हैं?

पाठांत प्रश्नों के उत्तर

3.1

1. वे दक्षिण-पूर्व एशिया की कला विशेषज्ञ एवं इतिहासज्ञ थीं।
2. श्री रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने उन्हें शान्ति निकेतन में अध्यापन हेतु आमंत्रित किया था।
3. भारत सरकार ने उन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया।
4. उनकी लिखी पुस्तके हैं- 'एक्सप्लोरिंग इंडियाज सैक्रेड आर्ट', 'द हिंदू टेंपल', 'अननोन इंडिया', 'रिचुअल आर्ट इन ट्राइब', 'विलेज' आदि

3.2

1. उन्हें भारतीय आदिवासी कला एवं संस्कृति का विशेषज्ञ माना जाता है।
2. उन्होंने मध्य भारत के गोंड एवं बैगा आदिवासियों की कला-संस्कृति पर कार्य किया।
3. उन्हें अपनी पुस्तक 'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ़ वैरियर एल्विन' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला।

3.3

1. (i) मेंगलूरू (कर्नाटक)
2. (i) भारत का शिल्प

3.4

1. उन्होंने 1980 के दशक में फ्रांस, अमेरिका और जापान में भारत महोत्सवों को आयोजन कराया।
2. वे श्रीमती इंदिरा गाँधी एवं श्री राजीव गाँधी की सांस्कृतिक सलाहकार रहीं।
3. उन्होंने राष्ट्रीय हस्तशिल्प एवं हथकरघा संग्रहालय की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
4. उनकी लिखी प्रमुख पुस्तकें हैं 'दा अर्दन ड्रम्स' तथा 'टैक्सटाइल्स एण्ड एम्ब्रायडरीज़ ऑफ़ इंडिया।

3.5

1. सीता देवी का जन्म 1914 में बिहार के मधुबनी जिले में हुआ।
2. वे मधुबनी लोकचित्र शैली की चित्रकार थीं।
3. राष्ट्रीय पुरस्कार, बिहाररत्न एवं पद्मश्री सम्मान प्रदान किए गए।

3.6

1. गुरप्पा चेट्टी कलमकारी के प्रसिद्ध चित्रकार हैं।
2. गुरप्पा चेट्टी का जन्म 1937 में आंध्र प्रदेश के श्रीकालाहस्ति में हुआ था।
3. भारत सरकार द्वारा उन्हें राष्ट्रीय पुरस्कार, शिल्पगुरू सम्मान तथा पद्मश्री से सम्मानित किया गया।
4. उन्होंने तेलुगू भाषा में भगवत मणिमाला, व्राथ पानी कलमकारी तथा भारत रतन्माला पुस्तकें लिखी हैं।

3.7

1. (iii) वार्ली चित्रकार
2. (i) महाराष्ट्र

3.8

1. जनगढ़ सिंह श्याम गोंड आदिवासी चित्र शैली के चित्रकार थे।
2. जनगढ़ सिंह श्याम का जन्म 1960 में मध्य प्रदेश के मण्डला जिले के पाटनगढ़ गाँव में हुआ था।
3. जनगढ़ सिंह श्याम की कला प्रतिभा को सर्वप्रथम प्रसिद्ध आधुनिक चित्रकार जगदीश स्वामीनाथन ने पहचाना एवं उन्हें चित्रकारी हेतु प्रोत्साहित किया।
4. कुछ लेखकों ने समकालीन गोंड चित्र शैली को जनगढ़ कलम कहना अधिक पसंद किया।

शब्दकोश

हित चिंतक	:	भला चाहने वाला
आर्थिक उन्नयन	:	समृद्धि
पुनरुद्धार	:	पुनः विकसित करना
अग्रणी	:	आगे रहने वाला
प्रशस्तिपत्र	:	प्रशंसापत्र
हस्तरंजित	:	हाथों से रंग करना

मॉड्यूल 2: माध्यम, तकनीक और शैली

4. पारंपरिक और समकालीन विधि और सामग्री
5. लोककला के प्रतीक एवं अभिप्राय
6. लोक व जनजातीय कला का महत्व और उपयोगिता
7. संभावना और अवसर

4

पारंपरिक और समकालीन विधि और सामग्री

प्रिय शिक्षार्थी, पिछले पाठ में हमने इस क्षेत्र से जुड़े विद्वानों और कलाकारों के योगदान के विषय में जाना। इस पाठ में हम लोक और आदिवासी कला में प्रयोग किये जाने वाले पारंपरिक और समकालीन पद्धति एवं सामग्री के विषय में जानेंगे। मानव आरंभ से ही प्रकृति के निकट रहा है। उसकी हर आवश्यकता प्रकृति द्वारा ही विभिन्न माध्यमों से पूरी होती रही है। आदिमानव ने प्रकृति के अध्ययन एवं उसकी घटनाओं से प्रेरित होकर विभिन्न पद्धतियों का विकास किया। उसने आसपास के वातावरण में उपलब्ध प्राकृतिक उपादनों और वस्तुओं के परीक्षण और निरीक्षण से सहज उपलब्ध सामग्री का समुचित उपयोग करना सीखा। उसने पाया कि पेड़-पौधों के पत्ते, फल, फूल और छाल अनेक रंगों के हैं। मिट्टी और पत्थरों के भी अनेक रंग हैं। इनमें से कुछ सतह पर रगड़ने से अपने रंग छोड़ते हैं, कुछ पानी में घुलकर पानी को रंगीन बना देते हैं और कुछ को धरती की सतह पर रखकर विशेष आकार में निरूपित किया जा सकता है। कुछ जिज्ञासु लोगों ने अपने निरीक्षण में पाया होगा कि पानी में घुली मिट्टी धूप में सूखने पर सतह पर उसे जिस आकार में लगाया गया हो वैसी छाप छोड़ती है। उन्होंने यह भी पाया होगा कि रंगीन पत्थर पीसने पर एक विशेष रंग का चूर्ण प्राप्त होता है, जिसे प्रयोग में लाया जा सकता है। आदिवासी-लोककला में कलाकारों द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले रंग और चित्रण पद्धतियाँ मानव के इन्हीं प्रयोगों का परिणाम हैं। ग्रामीण कला में इन्हीं रंगों का प्रयोग किया गया है।

सभ्यता के विकास के साथ-साथ आदिवासी-लोक चित्रकला की सामग्री एवं पद्धतियों में भी परिवर्तन हुए। उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर एवं मध्य प्रदेश के भीमबेटका में मिले प्रागैतिहासिक कालीन गुफा चित्रों से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है, क्योंकि वे चित्र भी सफ़ेद मिट्टी या चूना तथा गेरू से बनाए गए हैं जो आदि चित्रकारों के अपने आसपास उपलब्ध सामग्री थी। इसके उपरांत सिंधु घाटी की सभ्यता से मिले चित्रित बर्तनों, खिलौनों एवं मूर्तियों से भी ज्ञात होता है कि उस समय के चित्रकारों ने सफ़ेद मिट्टी/चूना, गेरू एवं काली मिट्टी एवं काजल का प्रयोग चित्रांकन हेतु किया; किन्तु ये रंग काली मिट्टी अथवा पशुओं की चर्बी में घोलकर संभवत: कूचियों की सहायता से लगाए गए थे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के उपरांत आप :

- आदिवासी एवं लोक चित्रों में प्रयुक्त होने वाली सामग्री पर चर्चा कर सकेंगे;
- आदिवासी-लोक चित्रों में काम आने वाली पारंपरिक एवं अपारंपरिक समाग्रियों के स्वरूप को समझ सकेंगे;
- आदिवासी एवं लोक चित्रों में प्रयुक्त सामग्रियों में समय के साथ हुए बदलाव का विश्लेषण कर सकेंगे;
- आदिवासी एवं लोक चित्रण की पद्धतियों को जान सकेंगे।

वर्तमान में प्रयोग की जाने वाली सामग्री

वर्तमान समय में यदि हम आदिवासी लोक चित्रों में प्रयुक्त होने वाली चित्रण सामग्री पर दृष्टिपात करें तो हमें उनमें प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान समय तक एक निरंतरता दिखाई देती है। घर की दीवारों और आँगनों को गोबर-मिट्टी से लीपने के उपरांत उन पर बनाए जाने वाले चित्रों में आज भी विभिन्न रंगों की मिट्टी पेड़-पौधों के फूल-पत्तों एवं छाल से निकाले गए रंग, विभिन्न रंगों को पीस कर तैयार किए गए रंगीन चूर्ण; जैसे- प्राकृतिक, वनस्पति के एवं खनिज के रंगों का प्रयोग करने की पद्धति में कुछ परिवर्तन आया है।

कालांतर में सामाजिक व्यवस्था में बदलाव के साथ जाति व्यवस्था का उदय हुआ और अपने कार्यों एवं जीवनयापन के तरीकों के अनुरूप व्यावसायिक जातियाँ अस्तित्व में आईं। इनमें अनेक शिल्पी समुदायों; जैसे- सुनार, लोहार, कुम्हारों की भाँति व्यावसायिक चित्रकार अथवा चितेरे समुदाय का भी विकास हुआ। ये चित्रकार समुदाय के लोग व्यावसायिक स्तर पर लोक चित्रों का सृजन करते रहे और लोकजीवन की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करते रहे। इन चित्रकारों ने लोकचित्रों में प्रयुक्त होने वाली सामग्री एवं चित्रण पद्धतियों में अनेक नए आयाम जोड़े और उनमें एक व्यवस्था उत्पन्न कर ली।

4.1 रंग

सर्वप्रथम हमें लोक ओर आदिवासी कलाओं में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न प्रकार के रंगों को जानना होगा।

शीर्षक : रंग
प्रकार : एक्रायलिक प्लास्टिक, तेल आदि
प्रयोग : कला, लोककला, अनुष्ठान तथा गृह सज्जा आदि

संक्षिप्त परिचय

औद्योगिक विकास के साथ बाज़ार में उपलब्ध रंगों, ब्रुशों एवं अन्य सहायक समाग्री के सहज उपलब्ध होने से आदिवासी एवं लोकचित्रों में प्रयुक्त होने वाली सामग्री में परिवर्तन आया है। विशेष

तौर से पिछले चार दशकों में जब से आदिवासी एवं लोक चित्रों का शहरी बाज़ार में विक्रय आरंभ हुआ है, तब से आदिवासी एवं लोकचित्रों की दो स्पष्ट श्रेणियाँ ही बन गई हैं। एक वे चित्र, जो जन सामान्य अथवा घरेलू स्त्रियाँ त्योहारों एवं अनुष्ठानों हेतु बनाती हैं और दूसरे वे चित्र, जो दक्ष आदिवासी-लोक चित्रकारों द्वारा शहरी बाज़ार में विक्रय हेतु बनाए जाते हैं। इन दोनों ही श्रेणियों के चित्रों की चित्रण सामग्री एवं चित्रण पद्धतियों मे अन्तर होता है। आमजन जहां प्राकृतिक एवं वनस्पति के रंगों एवं कपड़ें के टुकड़े एवं बॉस, घास या वृक्ष की टहनियों से बनी कूचियों का प्रयोग कर चित्र बनाते हैं, वहीं बाज़ार हेतु चित्रांकन के लिए बाज़ार में उपलब्ध तैयार रंगों एवं ब्रुशों आदि का प्रयोग होने लगा है।

पारंपरिक लोक कलाकृतियों का उपयोग पूजा अनुष्ठानों हेतु किया जाता था। अत: उनका प्रयोग केवल अनुष्ठान पूर्ति तक ही सीमित था। वर्तमान समय में इनका प्रयोग शहरी उपभोक्ताओं द्वारा गृहसज्जा हेतु किया जाने लगा, जिसके कारण इनके निर्माण में काम आने वाली सामग्री और निर्माण तकनीक में बहुत परिवर्तन आ गया है। अब इन्हें अधिक आकर्षक, चमकदार और मजबूत बनाना आवश्यक है। लोककला की पारंपरिक सामग्री में मिट्टी एवं वनस्पति रंग प्रयुक्त किए जाते थे, जो चमकरहित और कच्चे होते थे। वर्तमान में इनके स्थान पर एक्रायलिक, प्लास्टिक एवं तैलरंग प्रयोग में लाए जाते हैं जो अधिक स्थाई और चमकदार होते हैं।

चित्र 4.1: रंग

मूल लोक चित्रों की कीमत अधिक होती है। उनकी कीमत घटाने तथा कम समय में उनकी अधिक प्रतिलिपियाँ तैयार करने हेतु आजकल चित्र की आकृतियों की बाह्य रेखाएँ स्क्रीनप्रिंट पद्धति द्वारा

छाप ली जाती हैं तथा उनमें हाथ से रंग भर दिए जाते हैं। इस प्रकार तैयार किए गए चित्र की कीमत बहुत कम हो जाती है।

आजकल कागज़ के स्थान पर लोकचित्रों को कैनवास पर अथवा प्लायबोर्ड पर भी बनाया जाने लगा है। कपड़े पर भी चित्र बनाए जाने लगे है। कपड़े पर फैब्रिक कलर एवं प्लायबोर्ड एवं कैनवास पर एक्रायलिक कलर प्रयुक्त किया जाता है तथा चित्र पर अतिरिक्त चमक लाने हेतु उस पर वार्निश का एक कोट भी किया जाने लगा है। बाज़ार में अच्छे दाम प्राप्त करने के लिए अब लोक चित्रकार अपने बनाए चित्रों की फ्रेमिंग-माउण्टिंग कराने लगे हैं। इससे चित्र अतिरिक्त सुंदरता तो प्राप्त करते ही हैं, उन्हें घर की दीवारों पर सजाना भी आसान हो जाता है।

सामान्य विवरण

रंग : सीधे ही प्रयोग में लाए जाने वाले रंग, जिन्हें आम लोगों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है; जैसे- विभिन्न रंगों की मिट्टियाँ लाल मिट्टी, काली मिट्टी, पीली मिट्टी, सफ़ेद मिट्टी, खड़िया, गेरू, चावल का आटा, आदि। इनका प्रयोग घरों में भित्ति एवं भूमि आलंकरण हेतु तथा मिट्टी के बर्तनों, खिलौने आदि पर रंगाकन एवं चित्रकारी हेतु किया जाता रहा है।

इन समाग्रियों का प्रयोग सूखे एवं गीले दोनों ही रूप में किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों की अनेक युवतियाँ चावल के सूखे आटे से अल्पना, रंगोली, अरिपन, चौक आदि बनाती हैं; जबकि वार्ली आदिवासी चावल के आटे को गीला कर बनाए गए लेप (पेस्ट) से भित्ति चित्र बनाते हैं।

दूसरे समूह में आने वाले रंग वे हैं, जिन्हें तैयार कर प्रयोग में लाया जाता है। उनका विकास अधिकांशत: व्यावसायिक चित्रकार जातियों से संबंधित चित्रकारों द्वारा किया जाता है। इन सामग्रियों एवं उनसे तैयार किए जाने वाले रंगों के सामान्यत: दो घटक होते हैं- एक, रंग उत्पन्न करने वाला पदार्थ और दूसरा, गोंद अथवा बाइन्डर जो उस रंग को चित्रण सतह पर चिपकने में सहायक होता है। आम तौर पर यह बाइंडर आम, नीम, बबूल या किसी अन्य वृक्ष का गोंद होता है। कभी-कभी बेलपत्र या कैंथ वृक्ष के फल के गूदे से तैयार पेस्ट भी बाइंडर के तौर पर काम में लाया जाता है।

सफ़ेद रंग : सफ़ेद रंग बनाने के लिए आमतौर पर खड़िया एवं चूने का प्रयोग तो किया ही जाता है, परंतु उत्तम प्रकार का सफ़ेद रंग बनाने के लिए उड़ीसा एवं बंगाल के पटचित्रकार समुद्र से प्राप्त होने वाले शंखों का प्रयोग करते हैं। शंख से सफ़ेद रंग तैयार करने हेतु उन्हें भली प्रकार साफ करके मिट्टी के बर्तन में गर्म किया जाता है। गर्म किए जाने से शंख फूल जाते हैं एवं उन्हें महीन पीसना आसान हो जाता है। पीसने के उपरांत चूर्ण को छान कर रख दिया जाता है। जब सफ़ेद रंग प्रयोग करना होता है, तब इस छने शंख चूर्ण को गोंद मिले पानी में घोलकर रंग बना लिया जाता है।

पीला रंग : पीला रंग प्राप्त करने के लिए हल्दी एवं हरताल (आर्सेनिक) का प्रयोग किया जाता है। हल्दी से प्राप्त पीला रंग गहरा एवं चमकदार होता है। रंग तैयार करने हेतु कच्ची हल्दी अथवा हरताल पत्थर को पीसकर महीन चूर्ण बना लिया जाता है, जिसे गोंद मिले पानी में घोलकर चित्रांकन किया जाता है।

सिंदूरी रंग : अत्यंत चमकदार नारंगी रंग प्राप्त करने हेतु सिंदूर का प्रयोग किया जाता है। आजकल सिंदूर का प्रयोग बहुत कम हो गया है। इसे किसी तेल में मिलाकर काम में लाया जाता है।

लाल रंग : लाल रंग भारतीय लोकचित्रों का एक महत्वपूर्ण घटक है। इसे प्राप्त करने हेतु पलाश एवं गुड़हल के फूल तथा हिंगुल पत्थर का प्रयोग किया जाता है। हिंगुल को पीस कर उसके महीन चूर्ण को गोंद मिले पानी में मिलाकर रंग तैयार कर लिया जाता है।

गुलाबी रंग : गुलाबी रंग प्राप्त करने हेतु हिंगुल चूर्ण एवं शंख चूर्ण को आधी-आधी मात्रा में मिलाकर मिश्रण तैयार किया जाता है। इस मिश्रण में गोंद मिला पानी मिलाकर रंग बना लिया जाता है। कुछ स्थानों पर गुलाबी रंग के लिए महावर या आलता का भी प्रयोग किया जाता है।

हरा रंग : अधिकांश स्थानों पर हरा रंग किसी लता या वृक्ष के मुलायम पत्तों को रगड़कर प्राप्त किया जाता है। बुंदेलखण्ड क्षेत्र में सेम फली की लता के पत्तों से तथा मालवा क्षेत्र में बालौड़ वृक्ष के पत्तों से हरा रंग प्राप्त करते हैं। बंगाल, बिहार और ओड़िसा के लोक चित्रकार नील और पेवड़ी के मिश्रण से हरा रंग बनाते हैं।

चित्र 4.2

काला रंग : काली मिट्टी के अतिरिक्त रेखांकन हेतु गहरा काला रंग काजल से बनाया जाता है। काजल तैयार करने हेतु मिट्टी के तेल की चिमनी जलाकर उसे किसी मिट्टी के बर्तन से ढ़क दिया जाता है, चिमनी का धुँआ बर्तन की सतह पर जमा हो जाता है। इस प्रकार प्राप्त काले चूर्ण को गोंद मिले पानी में घोलकर काला रंग तैयार किया जाता है।

नीला रंग : नील का प्रयोग लोक एवं आदिवासी चित्रों में बहुतायत से होता है। नील को गोंद मिले पानी में घोलकर नीला रंग तैयार किया जाता है। कुछ चित्रकार अपराजिता वृक्ष के फूलों से भी नीला रंग तैयार करते हैं।

गोंद : गोंद द्वारा रंगों को पक्का और चमकदार बनाया जाता है। गोंद रंगों को चित्र फलक पर चिपकने में सहायता तो करता ही है, साथ ही रंगों को ब्रश द्वारा चित्र फलक पर लगाने योग्य भी बनाता है।

सामान्यत: खैर, बबूल, आम एवं कैंथ वृक्ष से प्राप्त गोंद का प्रयोग किया जाता है। गोंद प्राप्त करने हेतु इन वृक्षों के तने को अनेक स्थानों पर चाकू या कुल्हाड़ी से छील दिया जाता है। कुछ दिनों उपरांत वृक्ष से छीले गए स्थानों पर गोंद निकल कर इकट्ठा हो जाता है। इसे इकट्ठा कर सुखा लिया जाता है। बाद में इसे पीस कर मोटा चूर्ण बनाते हैं, जिसे पानी में घोलकर रंग में मिलाया जाता है।

सरेस : जानवर की चर्बी को सुखाकर रखते हैं। जब हमें रंग में मिलाना होता है, तो इस चर्बी को गर्म पानी में उबालकर गोंद के रूप में प्रयोग में लाते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.1

1. मानव ने चित्रण पद्धतियों के विकास हेतु कहाँ से प्रेरणा ली?
2. आदिवासी लोक चित्रकारों ने चित्रण सामग्री का चुनाव किस प्रकार सीखा?
3. आदिमानव द्वारा बनाए गए अधिकांश गुफा चित्र किन रंगो से बनाए गए?
4. सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्राप्त अवशेषों में चित्रण हेतु किस सामग्री का प्रयोग हुआ है?

क्रियाकलाप

एक कलर चार्ट बनाइए और रंगों के स्थानीय रूप से उपलब्ध स्रोतों को भी लिखिए।

रंग	स्रोतों

4.2 कूची अथवा तूलिका

शीर्षक : **कूची**

प्रयोग : **चित्रांकन**

सामग्री : **बाँस, घास, रूई का फाहा आदि**

प्रकार : **बाँस की तीली को चिकना कर, रूई के फाहे को कूची के सिरे पर बांधा जाता है**

संक्षिप्त परिचय

सामान्यत: आदिवासी एवं लोक चित्रकार हाथों की उंगलियों पर कपड़े के टुकड़े लपेटकर घास की तीलियों आदि की सहायता से चित्रांकन करते रहे हैं। इनमें वृक्ष की टहनियों के एक सिरे को कूटकर कूचियाँ बनाने का भी चलन रहा है। बाँस की तीलियाँ, खजूर के पत्ते के मध्य नाड़ी के टुकड़ों के एक सिरे को कूट कर कूचियाँ बनाई जाती हैं। बॉस या घाँस की तीली के सिरे पर रूई का फाहा लपेट कर भी चित्रांकन किया जाता है।

चित्र 4.3: कूची अथवा तूलिका

सामान्य विवरण

व्यावसायिक लोक चित्रकारों ने अपने चित्रांकन को अधिक परिमार्जित एवं रंगांकन को सरल बनाने हेतु उन्नत कूचियों या तूलिका का बनाना और प्रयोग करना आरंभ किया। उन्होंने तूलिका के दो भाग बनाए एक कूची का हत्था जो बाँस की तीली को चिकना कर तैयार कर दिया जाता है और दूसरा मुलायम बालों या रूई का फाहा जिसे कूची के एक सिरे पर बाँधा जाता है। रंगों की गुणवत्ता और चित्रांकन की जटिलता या महीनता के अनुरूप कूची हेतु बालों का चयन कर कूची बनाई जाती है। इसमें गिलहरी, चूहा, गाय, बकरी आदि की पूंछ के बालों का प्रयोग किया जाता रहा है।

पाठगत प्रश्न 4.2

रिक्त स्थान भरिए :

1. व्यावसायिक लोक चित्रकार ..... प्रकार के ब्रुश बनाते हैं।
2. ब्रुश बनाने के लिए कलाकारों ..... प्रक्रिया का प्रयोग करते हैं।

4.3 अपारंपरिक सामग्री

शीर्षक : अपारंपरिक सामग्री
सामग्री : स्याही, पोस्टर रंग, फैब्रिक, तेल रंग आदि
प्रयोग : कपड़ा एवं दीवार रंगने के लिए

संक्षिप्त विवरण

जैसा कि इस पाठ में पहले भी कहा गया है कि औद्योगिक विकास एवं शहरीकरण के साथ पारंपरिक आदिवासी एवं लोक कथाओं मे प्रयुक्त होने वाली सामग्री एवं चित्रण पद्धतियों में भी

परिवर्तन आया है। ये परिवर्तन मुख्यत: इसलिए और मुखर हुए हैं, क्योकि अब आदिवासी-लोक कथाओं के बनाने के उद्देश्य और उसके उपभोक्ता दोनों ही बदल गए हैं अथवा बदल रहे हैं। अब इन चित्रों का एक बड़ा भाग अनुष्ठानों एवं आयोजनों की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नहीं अपितु जीविकोपार्जन हेतु बनाया जाता है। अत: इन चित्रों का एक उत्पाद के रूप में टिकाऊ और आकर्षक होना ज़रूरी है। साथ ही बाज़ार में सहज उपलब्ध तैयार मिलने वाली चित्रण सामग्री ने भी लोक चित्रकारों को आकर्षित किया है। इनके सरल प्रयोग और अच्छे नतीजों ने भी लोक चित्रकारों को इनके उपयोग हेतु प्रेरित किया है। यह अपारंपरिक चित्रण सामग्री अब परंपरागत सामग्री का स्थान बहुत तेज़ी से ले रही हैं।

चित्र 4.4: स्याही

कपड़ा एवं दीवार रंगने के लिए उपयोग में आने वाले पिगमेंट पाउडर कलर : लोक चित्रकारों द्वारा इनका उपयोग सबसे पहले आरंभ किया गया। चमकीले एवं विभिन्न छटाओं में गाँवों की छोटी-छोटी पंसारी की दुकानों पर भी उपलब्ध इन रंगों को कपड़ा रंगने या होली के रंग भी कहा जाता है। इनके साथ ही दीवाली पर खुले आम बेचे जाने वाले मकानों की पुताई हेतु प्रयोग किए जाने वाले चूने के रंग भी लोक कलाकारों द्वारा प्रयोग किए जाने लगे हैं।

लिखने के उपयोग में आने वाली स्याही : कागज़ पर लोक चित्रों के बनाए जाने के चयन के साथ ही बाज़ार में उपलब्ध विभिन्न रंगों की स्याही; जैसे- काली, लाल, हरी एवं नीली स्याही का उपयोग भी आरंभ हो गया है। साधारण तरल स्याही एवं सूखी टिकिया के रूप में उपलब्ध काली स्याही के साथ-साथ वाटर प्रूफ स्याही का भी प्रयोग किया जाने लगा है। विशेषत: मधुबनी लोकचित्र शैली के चित्रकारों में इनका प्रयोग बहुतायत से होता है। वर्तमान में गोंड आदिवासी चित्रकार रॉटरिंग ब्लैक इंक का प्रयोग बहुतायत से करते हैं।

पोस्टर कलर : बाज़ार में तैयार उपलब्ध पोस्टर कलर आदिवासी एवं लोकचित्रों की महत्वपूर्ण चित्रण सामग्री बन गए हैं। इनका उपयोग बाज़ार में बेचने हेतु बनाए गए चित्रों के साथ-साथ

अनुष्ठानिक एवं घरों की सज्जा हेतु बनाए जाने वाले चित्रों में भी हो रहा है। वार्ली आदिवासी अब सफ़ेद रंग हेतु चावल के आटे के स्थान पर सफ़ेद पोस्टर कलर ही प्रयोग करते हैं।

फैब्रिक एवं एक्रायलिक रंग : इन रंगों का प्रयोग आदिवासी एवं लोक चित्रों के कपड़े एवं कैनवास पर बनाए जाने के साथ आरंभ हुआ। भील, गौण्ड, वार्ली आदिवासियों एवं मधुबनी के लोक चित्रकारों ने इनका प्रयोग आरंभ किया और वर्तमान में यह सबसे अधिक प्रयोग कागज़, कपड़ा, कैनवास, लकड़ी, कागज़ की लुगदी से बने खिलौने, मिट्टी के बर्तनों आदि सभी पर समान रूप से किया जाने लगा है।

तैल रंग : तैल रंगों का उपयोग भी अब बाज़ार में बेचने हेतु कैनवास पर बनाए जाने वाले आदिवासी एवं लोक चित्रों में हो रहा है। गुजरात के राठवा आदिवासी इनका प्रयोग बहुतायत से कर रहे हैं। बस्तर के मुरिया एवं माडिया आदिवासी तथा मध्यप्रदेश के भील आदिवासी तैल रंगों से चित्रकारी करते हैं। नए किस्म के रंगों के उपयोग के प्रचलन के साथ चित्रकारी हेतु उपयोग होने वाली कूचियों आदि में भी बदलाव आया है। घास एवं बाँस की तीलियों तथा टहनियों से बनी कूचियों के स्थान पर क्राकल, पेन, रेडीमेड ब्रुश आदि का प्रयोग होने लगा है।

चित्रण पद्धतियाँ : सामान्यत: पारंपारिक आदिवासी एवं लोक चित्र दीवार अथवा भूमि पर बनाए जाते हैं, जिसके लिए पहले गोबर-मिट्टी घोल से लिपाई कर पृष्ठभूमि तैयार की जाती है। सूती कपड़े के एक टुकड़े को गोबर-मिट्टी या केवल मिट्टी के घोल में डुबाकर उससे लिपाई की जाती है। इसमें सूखने पर कूची की सहायता से रेखांकन किया जाता है। अधिकांशत: चित्र मुक्त हस्त चित्रण और एक रंगीय होते हैं, परंतु बहुरंगी चित्रों का अंकन करते समय सबसे पहले काले रंग से बाह्य रेखांकन कर तदुपरांत विभिन्न रंग भरे जाते हैं। बनावट की दृष्टि से चित्रण पद्धतियों को दो वर्गों मे रखा जाता है।

1. मुक्त हस्त चित्रण
2. ग्राफ़ आधारित चित्रण

मुक्त हस्त चित्रण : बाज़ार हेतु अथवा जीविकोपार्जन हेतु कागज़, कपड़े या कैनवास पर बनाए जाने वाले अधिकांश आदिवासी लोक चित्रों के अतिरिक्त दीवार पर बनाए जाने वाले अनुष्ठानिक पारंपरिक चित्र मुक्त हस्त चित्रण होते हैं। मधुबनी चित्र, वार्ली चित्र, गोंड चित्र, पिठौरा चित्र, पटुआ एवं पट चित्र, मांडना आदि अधिकांश भूमिचित्र जैसे अल्पना, कलम, कोलम, रंगोली और मंडन भी ग्राफ़ आधारित पद्धति से बनाए जाते हैं। ग्राफ़ आधारित चित्रों का स्वरूप ज्यामितीय रूप होता है। इन्हें बनाने के लिए भूमि पर समान दूरी पर रंग के सूखे चूर्ण से बिंदु रखे जाते हैं। बिंदुओं का फैलाव बनाए जाने वाले चित्र के अनुरूप रखा जाता है। इसके बाद विभिन्न बिंदुओं को मिलानेवाली सरल अथवा वक्रीय रेखाएँ खींची जाती हैं, जिससे चित्र का मूल आकार उभर आता है। अब रंग योजना के अनुरूप विभिन्न स्थानों पर रंग भरकर चित्रांकन पूर्ण कर लिया जाता है। ग्राफ़ आधारित पद्धति से चित्रांकन बिहार, महाराष्ट्र, ओड़ीसा, गुजरात, केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक आदि मे अधिक प्रचलित है।

पाठगत प्रश्न 4.3

बहु विकल्पीय प्रश्न :

1. चित्रकला की किसी एक अपरंपरागत सामग्री का नाम है-

   (i) स्याही (ii) पत्ता

   (iii) फूल (iv) बाँस

2. चित्र बनाने के लिए किसी एक प्रकार के रेखाचित्रों का नाम है-

   (i) सामग्री (ii) सार

   (iii) ग्राफ़ (iv) इनमें से कोई नहीं

आपने क्या सीखा

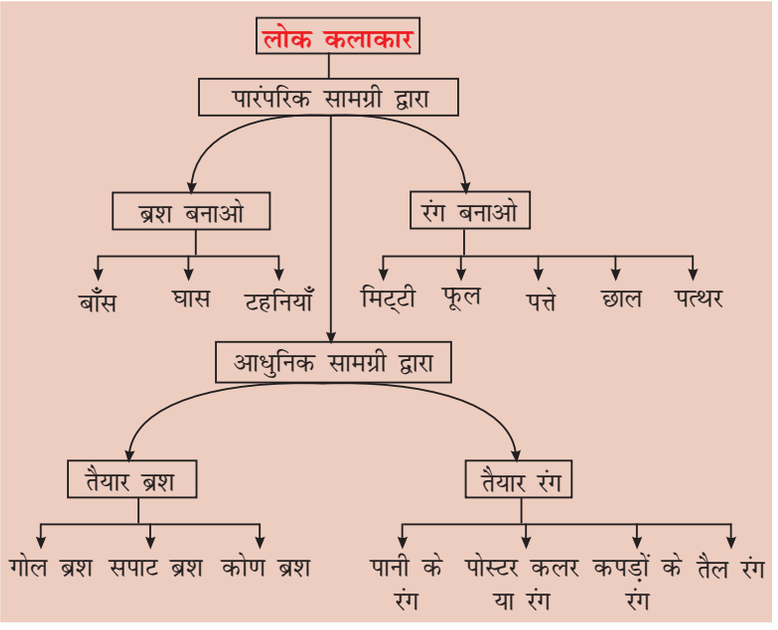

सीखने के प्रतिफल

शिक्षार्थी

- विभिन्न कृतियों के लिए पारंपरिक एवं अपारंपरिक विधियाँ और सामग्री प्रयोग कर सकते हैं।
- स्थानीय रूप से आसानी से उपलब्ध सामग्री से विभिन्न रंग आभाओं का निर्माण कर सकते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. मानव ने चित्रण पद्धतियों एवं सामग्री का विकास किस प्रकार किया?
2. लोकचित्रकारों की व्यवसायिक जातियों ने चित्रण सामग्री एवं पद्धतियों के विकास में क्या योगदान दिया?
3. आदिवासी लोक चित्रण में प्रयुक्त होने वाली पारंपरिक सामग्री की सूची बनाओ।
4. आदिवासी लोक चित्रकार चित्रण हेतु कूचियाँ किस प्रकार बनाते हैं?
5. लोक चित्रकार तूलिकाएँ बनाने हेतु किन पशुओं के बालों का प्रयोग करते हैं, सूची बनाइए।
6. शहरीकरण एवं औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप आदिवासी लोक चित्रण सामग्री में क्या अन्तर आया?
7. आदिवासी लोक चित्रकला में प्रयुक्त होने वाली अपारंपरिक सामग्री की सूची बनाइए।
8. पारंपरिक रूप से सफ़ेद रंग किन-किन सामग्रियों से प्राप्त किया जाता है?
9. लोक चित्रकार द्वारा रंग किस प्रकार बनाते हैं?
10. लोककला में प्रयुक्त होने वाली समसामयिक सामग्री के बारे में बताइए?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1

1. मानव ने प्रकृति के अध्ययन एवं उसकी घटनाओं से प्रेरित होकर विभिन्न चित्रण पद्धतियों का विकास किया।
2. उन्होंने प्रकृतिक उपादनों एवं वस्तुओं के निरीक्षण एवं परिक्षण से आस-पास सहज उपलब्ध सामग्री का चित्रण हेतु समुचित उपयोग करना सीखा।
3. यह चित्र अधिकांश सफ़ेद मिट्टी या चूने तथा गेरू से बनाए गए हैं।
4. यहाँ प्राप्त बर्तनों एवं खिलौने पर सफ़ेद मिट्टी या चूना, काली मिट्टी एवं गेरू का प्रयोग रंगाकन हेतु किया गया है।

4.2

1. बाँस तथा बालों 2. बाँस

4.3

1. (i) स्याही 2. (iv) ग्राफ़

शब्दकोश

पिगमेंट : रंग चूर्ण

स्क्रीनप्रिंट : मेश द्वारा स्याही भरने की तकनीक

ग्राफ़ : लेखाचित्र

5

लोककला के प्रतीक एवं अभिप्राय

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछले पाठ में हमने लोक और आदिवासी कला की पारंपरिक तथा समकालीन पद्धतियों और सामग्रियों को जाना। इस पाठ में हम लोककला के प्रतीकों और अभिप्रायों को जानेंगे। प्रतीक किसी वस्तु, चित्र, लिखित शब्द, ध्वनि या विशिष्ट चिह्न को कहते हैं जो संबंध, सादृश्यता या परंपरा द्वारा किसी अन्य वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है। प्रतीक रूपक के बहुत नजदीक होते हैं। प्रतीक में हम उस वस्तु से कहीं अधिक और भी आगे की कल्पना करते हैं। प्रतीक चिह्न मूल वस्तु की पहचान बन जाता है। प्रतीक केवल पदार्थ नहीं होते, उनका प्रयोग किसी सूक्ष्म केंद्रीय आशय को दर्शाने के लिये किया जाता है; जैसे- कमल सृष्टि के विस्तार का प्रतीक है। अब जहाँ-जहाँ भी कमल के फूल का अंकन होगा, वहाँ-वहाँ कमल का प्रतीकार्थ यही होगा। फिर चाहे वह कविता में हो या चित्रकला में।

अभिप्राय या मूलभाव को अंग्रेज़ी में 'मोटिफ़' (Motif) कहते हैं, जो शब्द और चित्र परंपरा दोनों में प्रयुक्त होता है। अभिप्राय अलंकरण के काम आते हैं। ये चित्र-शिल्प का प्रमुख लक्षण होते हैं। अभिप्रायों को इकाई रूप में भी चित्रित किया जाता है और इनकी पुनरावृत्ति से अभिकल्प भी तैयार किये जाते हैं।

प्रकृति के गूढ़ रहस्यों को समझने में मनुष्य ने अपनी कल्पना और तर्क शक्ति से जो बिम्ब, संकेत और अभिप्राय निर्मित किए, उन्हीं से प्रतीक का गठन हुआ। एक प्रतीक में अर्थ व्याप्ति बीजवत संपूर्ण पेड़ की तरह समाई होती है। प्रतीक मनुष्य की वह अभिव्यक्ति है, जिसे मनुष्य सीधे नहीं कह पाता। वह उसे सादृश्य भाव के अभिप्रायों से प्रकट करता है, तब वह संरचना प्रतीक हो जाती है। अभिप्राय के बिना प्रतीक नहीं रह पाता और बिना प्रतीक के आलंबन के अभिप्राय भी नहीं रह पाता। कहने का मतलब यह है कि चाहे कला हो या साहित्य, कभी अभिप्राय कोई प्रतीक बन जाता है और कभी पूरा प्रतीक अभिप्राय हो जाता है। दोनों एक-दूसरे के अन्योन्याश्रित हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- लोक प्रतीकों को पहचान कर सकेंगें;
- कला में लोक प्रतीकों का प्रयोग कर पाएँगे;
- लोकचित्र परंपरा में प्रचलित लोक प्रतीकों का उल्लेख कर सकेंगें;
- लोककला शैली में अभिप्रायों और लोक प्रतीकों के महत्व का वर्णन कर सकेंगे;
- लोकचित्र शैलियों के प्रमुख लोक प्रतीकों और अभिप्रायों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।

लोकचित्र परंपरा में कई प्रकार के लोक अभिप्राय और प्रतीक उपयोग में आते हैं, जो चित्रित विषय को पूरी सामर्थ्य से अभिव्यक्त करते हैं। भारत की विभिन्न लोकचित्र शैलियों में कई अभिप्राय और लोक प्रतीकों का प्रयोग होता है, जिनमें बिहार की मधुबनी, ओडिशा की उड़िया पट्ट, बंगाल की पटुआ, महाराष्ट्र की चित्रकथी और आंध्रप्रदेश की कलमकारी तथा चेरियाल पटम प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त परंपरागत भित्ति और भूमि चित्रों में अभिप्राय और लोक प्रतीकों की उपस्थिति मिलती है।

- प्रतीकों के प्रकार-

1. ज्यामितिक प्रतीक

   जैसे- बिंदु, शून्य, रेखा, त्रिकोण आदि।

2. पौराणिक प्रतीक

   जैसे- स्वस्तिक, त्रिशूल, चक्र, ओम, कलश आदि।

3. प्राकृतिक प्रतीक

   जैसे- प्रकृति, सूर्य, चंद्र, तारे, पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, अग्नि आदि।

4. वानस्पतिक प्रतीक

   जैसे- पेड़-पौधे, बीज, कमल, पत्ते, फूल, फल आदि।

5. जैविक प्रतीक

   जैसे- पशु-पक्षी, जीव, तोता, मयूर, कामधेनु, नाग आदि।

6. दैविक प्रतीक

   जैसे- लोक देवी-देवता।

5.1 अभिप्राय

5.1.1 पिल्ली अडगू

प्रतीक

चिह्न : पिल्ली अडगू (कलमकारी)
स्थान : श्री कालाहस्ती (आंध्रप्रदेश)
कलाकार : स्व. एम.मुनिरेड्डी
माध्यम : कपड़ा, स्याही, जल वनस्पति रंग
आकार : 3' × 4'
संकलन : आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल, म. प्र.

संक्षिप्त परिचय

आंध्रप्रदेश की कलमकारी लोकचित्र शैली में '**पिल्ली अडगू**' यानी बिल्ली के पैरों के चिह्न अलंकरण के लिये हर जगह बनाए जाते हैं। बिल्ली के पैर पवित्र माने जाते हैं और उन्हें अभिप्राय के रूप में परंपरागत चित्रों में सर्वत्र चित्रित किया जाता है। कलमकारी चित्रशैली में पिल्ली अडगू जहाँ खाली जगह को भरने का काम करते हैं, वहीं बार्डर में भी पिल्ली अडगू बनाये जाते हैं। पिल्ली अडगू का आकार जगह के अनुरूप बड़ा-छोटा हो सकता है। पिल्ली अडगू का कोई रंग सुनिश्चित् नहीं होता। आवश्यकतानुसार कलाकार किसी भी रंग से इनको बना सकता है। इस प्रतीक चिह्न या अभिप्राय का प्रयोग सभी कलमकारी चित्रकार परंपरा से करते आए हैं।

चित्र 5.1: पिल्ली अडगू (कलमकारी)

सामान्य विवरण

यह चित्र (5.1) पिल्ली अडगू कलमकारी तकनीक से बनाया गया पटचित्र है। यह चित्र आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल में प्रदर्शित है। इस चित्र में एक गिलहरी को फूलों के वृक्ष पर एक टहनी पर फल खाते हुए दर्शाया गया है। यह पूरा चित्र सजावटी शेली में प्रतीक की पुनरावृत्ति करते हुए चित्रित किया गया है। गिलहरी भूरे रंग में चित्रित की गई है, जबकि चिड़िया को पीले, लाल तथा हरे रंग से बनाया गया है। इसकी चोंच लाल रंग से बनाई गई है। चित्र में पत्ते भी पीले तथा नारंगी रंग से बनाए गए हैं।

पाठगत प्रश्न 5.1

1. आंध्रप्रदेश की लोक चित्र शैली का क्या नाम है?
2. पिल्ली अडगू का क्या अर्थ है?
3. पिल्ली अडगू चित्र के कलाकार का क्या नाम है?
4. इस चित्र में चिड़िया को किस-किस रंग से बनाया गया है?

क्रियाकलाप

किसी पुस्तकालय या आर्ट गैलरी में जाकर चार ज्यामितीय तथा चार पौराणिक प्रतीकों को एकत्र कीजिए, जिन्हें पारंपरिक लोककला में प्रयुक्त किया जाता हो। एक-एक कर इन्हें चिपकाकर उनके विषय में दो-दो पंक्तियां लिखिए।

प्रतीक का चित्र	प्रतीक का वर्णन

5.2 लटपटिया सुआ (मधुबनी)

प्रतीक

चिह्न : लटपटिया सूआ (अभिप्राय) कोहबर, मधुबनी

कलाकार : महासुंदरी देवी, रांटी, मधुबनी, बिहार

माध्यम : कागज़ और लाल-काली स्याही

आकार : 8½" × 9½"

संकलन : निजी संकलन में

संक्षिप्त परिचय

मधुबनी लोकचित्र शैली में 'लटपटिया सुआ' सजावट के लिए सबसे अधिक बनाया जाता है। इसे कहीं काली स्याही के रेखांकन से और कहीं रंगों के साथ बनाया जाता है। मधुबनी में इसकी आकृति रूढ़ हो गई है, इसलिए मधुबनी के लगभग सभी चित्रों के अलंकरण में प्राय: इसकी आकृति एक जैसी मिलती है। सुआ जहाँ धन-धान्य तथा समृद्धि का प्रतीक है, वहीं वह प्रेम का भी प्रतीक माना जाता है।

चित्र 5.2: लटपटिया सूआ (मधुबनी)

सामान्य विवरण

लटपटिया सुआ प्रेम से भरे हुए तोते के जोड़े के अर्थ में प्रयुक्त होता है। यह नवदाम्पत्य जीवन के अमित प्रेम और सुख-समृद्धि का प्रतीक होता है। सुए (तोते) को मधुबनी चित्रकला में 'कोहबर' से लिया गया है, जहाँ से मधुबनी लोकचित्र शैली का उद्‌भव और विकास हुआ है।

यह चित्र (5.2) कागज़ पर बना हुआ मधुबनी शैली का चित्र है। इस चित्र को विश्वप्रसिद्ध मधुबनी कलाकार महासुंदरी देवी ने बनाया है जो उनके निजी संकलन में मधुबनी, बिहार में है। यह चित्र काली लाल स्याही से बनाया गया है। इस चित्र के मध्य में एक वृक्ष बनाया गया है। इस वृक्ष के दोनों तरफ़ एक तोते का जोड़ा बैठा बनाया गया है। तोता धन-धान्य समृद्धि एवं प्रेम का प्रतीक माना गया है जो मधुबनी शैली का एक लोकप्रिय विषय है। वृक्ष की टहनियाँ तथा पत्ते अलंकृत शैली में कलम की निब से बनाए गये हैं। तोते की चोंच में लाल रंग भरा हुआ है। इस चित्र का बार्डर काली रेखाओं के द्वारा बनाया गया है तथा लाल रंग की पट्टी भी बीच में बनाई गई है।

पाठगत प्रश्न 5.2

1. लटपटिया सूआ किस पक्षी का प्रतीक नाम है?
2. मधुबनी लोकचित्र शैली किस राज्य की चित्र शैली है?
3. लटपटिया सूआ किन-किन शुभ कामनाओं को सूचित करता है?
4. मधुबनी शैली के चित्र कैसे बनाए जाते हैं?

5.3 धाड़ी या धारी उडिया पट्ट

प्रतीक

चिह्न : धाड़ी, उडिया पट्ट

कलाकार : जगन्नाथ महापात्र, रघुराजपुर, ओडिशा

माध्यम : पट्ट, जल और मिट्टी रंग

आकार : 18" × 12"

संकलन : आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल

संक्षिप्त परिचय

उड़िया पट्ट लोकचित्र शैली में फलक के चित्रों के चारों ओर '**धाड़ी या धारी**' (बार्डर) बनाने की परंपरा है। इसमें कई तरह के फूल, पत्तों और फलों के अभिप्राय बनाकर अलंकृत करने की प्रथा है, जिससे चित्र की सुंदरता और अर्थवत्ता में वृद्धि होती है। इसमें भाँति-भाँति के कई बार्डर्स बनाए जाते हैं; जिनमें पत्र केरा, अलखपंख, पत्रझाड़ा, फूलकेरा, फूलमोड़ा, पंचपत्री, पत्रकोसा, कुंभापाटा, अबकसिया, लिकोरी आदि प्रमुख हैं।

सामान्य विवरण

उडिया पट्टचित्र शैली में जितना महत्व मुख्य विषय चित्रित करने का है, उतना ही धाड़ी या बार्डर को सजाने का है। उडिया पट्टचित्र का बार्डर भी कोई दक्ष कलाकार ही बना सकता है।

चित्र 5.3: धाड़ी, पट्ट चित्र

पत्र केराधाड़ी में पत्तों की झालर होती है। झालर के बीच-बीच में फूल होते हैं। अलखपंख में धाड़ी में पक्षियों के पंखों विशेषकर मयूरपंख की झालर होती है और बीच में फूल होते हैं। पत्र झड़ाधाड़ी में पत्ते नीचे उतरते यानी लटकते दिखाये जाते हैं। फूलकेरा में फूलों की झालर होती है। फूलमोड़ा में फूल की बेल अधिक मुड़ी हुई होती है। पत्र कुंभधाड़ी में पत्ते कलश के आकार के चित्रित किये जाते हैं। पंचपत्री में पाँच प्रकार के पत्तों को समूहरूप में चित्रित किया जाता है। पंचकोसा पत्ती की मिश्रित पाँच संख्या बेल के रूप में बनाई जाती है, जिसके मध्य में फूल बनाया जाता है। कुंभ पाटाधाड़ी में पत्तों को मटकी या कलशनुमा बनाया जाता है। जिसे देखने पर कुंभ या कलश का आभास पूरी धाड़ी में होता है। सभी प्रकार की धाड़ियाँ अत्यंत सुंदर होती हैं।

पाठगत प्रश्न 5.3

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. धाड़ी या धारी पट्टचित्रण किस राज्य की लोकचित्र शैली है?

   (i) बिहार (ii) राजस्थान

   (iii) ओडिशा (iv) कर्नाटक

2. धारी पट्टचित्रण किस कलाकार के द्वारा बनाया गया चित्र है।

   (i) जगन्नाथ मिश्र (ii) दलाल सिंह

   (iii) जगन्नाथ महापात्र (iv) मनशा देवी

क्रियाकलाप

एक ए-4 कागज़ पर धाड़ी पट्टचित्र जल रंगों से बनाइए। हाशिए पर पक्षियों के पंख और साथ में फूल अभिप्राय भी बनाइए।

5.4 सूर्य

लोक प्रतीक

लोक प्रतीक : सूर्य

कलाकार : महासुंदरी देवी, रांटी, मधुबनी, बिहार

माध्यम : कागज़ और रंग

आकार : 3½" × 3½"

संकलन : निजी

संक्षिप्त परिचय

प्रिय शिक्षार्थियों! आप जानते हैं कि सूर्य एक प्राकृतिक प्रतीक हैं। लोक सूर्य से ही आलोकित होता है। सूर्य के कारण दिन-रात होते हैं। पृथ्वी की गतिविधि के केंद्र में सूर्य ही है। सृष्टि में सूर्य सबसे तेजस्वी नक्षत्र है। यह सभी ग्रह-नक्षत्रों का स्वामी है। इसलिए सूर्य प्रकाश, उर्जा, गति और समय का प्रतीक है। रायगढ़ के सिंघनपुर प्रागैतिहासिक शैल चित्रों में सात किरणों वाले सूर्य की आकृति का अंकन प्रतीक पूजन का आदिम प्रामाणिक दस्तावेज है। पारंपरिक लोक चित्रकला में सूर्य का अंकन प्राय: गोलाकार रूप में किरणयुक्त किया जाता है, जो अभिप्राय और लोकप्रतीक दोनों रूपाकारों में प्रयुक्त होता है। आदिम मानव ने सूर्य को प्रकृति के आदि देवताओं में प्रतिष्ठित किया है।

सामान्य विवरण

लोककला में सूर्य का चित्रांकन अत्यंत सरलता से किया जाता है। गोल आकृति या परिधि-वृत्त बनाकर उसके सब ओर छोटी-बड़ी खड़ी या आड़ी-टेढ़ी रेखाएँ खींचकर सूर्य प्रतीक को अभिव्यक्त किया जा सकता है। इसका केवल रेखांकन कर और रंग भरकर भी सूर्य को दिखाया जा सकता है। सूर्य का प्रयोग अभिप्राय और लोक प्रतीक दोनों रूपों में किया जा सकता है। सूर्य को भूमि, भित्ति, मंदिर, भवन, चित्र, शिल्प के अलंकरण, साज-सज्जा आदि में अभिप्राय के रूप में प्रमुख स्थान दिया जाता है। लोककलाओं में सूर्य का अंकन अनिवार्य होता है, वह शाश्वतता का भी प्रतीक है।

चित्र 5.4: सूर्य प्रतीक

पाठगत प्रश्न 5.4

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1. ..... लोकचित्रकला में सूर्य का अंकन गोलाकार रूप में किया जाता है।
2. लोककला में ..... चित्रांकन अत्यंत सरलता से किया जाता है।
3. सूर्य एक ..... प्रतीक है।
4. दिए गए लोक प्रतीक सूर्य का कलाकार ..... है।
5. लोककला में सूर्य ..... का भी प्रतीक है।

5.5 कमल

लोक प्रतीक

लोक प्रतीक : कमल
कलाकार : अज्ञात
माध्यम : कैनवास और रंग
आकार : 8' × 8'
संकलन : इंटरनेट से

संक्षिप्त परिचय

कमल सृष्टि का पहला लोक प्रतीक है, जो पृथ्वी की उत्पत्ति और विस्तार का कारक तत्त्व है। लोकचित्र परंपरा में कमल के अनेक रूपाकार मिलते हैं। कमल के विभिन्न अभिप्रायों के अलंकरण के रूप में सार्थक प्रयोग परंपरा से किए गए हैं। भूमि, भित्ति, मंदिर, भवन की बाह्य और आंतरिक सज्जा में कमल का प्रतीकात्मक अंकन लोक की स्थापत्य कला में बड़ी महत्ता के साथ किया जाता है। लोक के माँडणों और भित्तिचित्रों के अलंकरण में भी कमल का उपयोग कल्पनाशील तरीके से हुआ है।

चित्र 5.5: कमल प्रतीक

सामान्य विवरण

कमल के विभिन्न रूपों यथा चर्तुदल, षट्दल, अष्टदल, षोडषदल वाले कमल का चित्रण शैलचित्रों, लोकचित्र शैलियों और लोककला में अवश्य मिलता है। कमल के प्रत्येक अंग को प्रतीकात्मक माना गया है। कमल की नाल को ब्रह्मनाल कहा गया है। पानी में तैरते कमल के पत्ते को जीवन का प्रतीक माना गया है। कमल की पंखुडियाँ जीवन और सृष्टि के विस्तार का प्रतीक हैं। कमल पुष्प के मध्य का हिस्सा ब्रह्माण्ड का प्रतीक है। लोक की वाचिक परंपरा और रचित साहित्य में कमल की अनेक उपमाएँ प्रतीक रूप में गढ़ी गई हैं। लोककला में कमल का अंकन अत्यंत सहज और सरल है। इसलिए कमल एक लोकप्रिय प्रतीक है।

पाठगत प्रश्न 5.5

सही उत्तर का मिलान कीजिए :

1.	लोक प्रतीक	:	8' × 8'
2.	कलाकार	:	केनवास और रंग
3.	माध्यम	:	अज्ञात
4.	आकार	:	कमल
5.	रूप	:	चर्तुदल

5.6 स्वस्तिक

लोक प्रतीक

लोक प्रतीक : स्वस्तिक
कलाकार : अज्ञात
माध्यम : कागज़ और रंग
आकार : 4½ × 4½
संकलन : मोटिफ्स

संक्षिप्त परिचय

स्वस्तिक संपूर्ण भारतीय संस्कृति का मांगलिक प्रतीक और चिह्न है; जिसमें धर्म, दर्शन, इतिहास, कला-साहित्य, संस्कृति सभी कुछ समाया है। संस्कृति का ऐसा और इतना सारगर्भित, लोकव्यापी, संक्षिप्त, सरल, सुंदर और आकर्षक प्रतीक चिह्न विश्व में शायद ही कोई दूसरा हो। स्वस्तिक की प्रथम उपस्थिति प्रागैतिहासिक चित्रों में कई जगह मिलती है। भारत में स्वस्तिक के अंकन की परंपरा विभिन्न कला माध्यमों में रही है। लोक में यही स्वस्तिक साथिया या सातिया और चौक के रूप में प्रचलित रहा है। लोकचित्र कला में चाहे माँडणा हो या भित्तिचित्र अथवा कोई और अलंकरण हो, उसमें स्वस्तिक का अंकन सर्वाधिक पाया जाता है। स्वस्तिक लोक मंगल का प्रतीक है। स्त्रियाँ उसे हर व्रत-उपवास अनुष्ठान, मांगलिक अवसरों पर बनाना नहीं भूलती। इसे कई जगह चावल और जवार के आटे, हल्दी-कुंकुम और रंग रेखाओं से बनाया जाता है।

चित्र 5.7: स्वस्तिक-प्रतीक

सामान्य विवरण

स्वस्तिक आड़ी-खड़ी रेखाओं के मिलने से बनता है। जिस जगह आड़ी-खड़ी रेखाएँ एक केंद्र पर मिलती हैं, वह स्वस्तिक का मूल बिंदु होता है। आड़ी-खड़ी रेखाओं पर आड़ी भुजाएँ विस्तार

का प्रतीक है। स्वस्तिक बनाना अत्यंत सरल है। इसलिए लोक में इसकी प्रतिष्ठा व्यापक है। लोक का कोई भी छोटा सा भी आनुष्ठानिक कार्य बिना स्वस्तिक पूजा के प्रारंभ नहीं होता। लोकचित्रों में स्वस्तिक अभिप्राय और प्रतीक दोनों रूपों में प्रचलित है। लोक अलंकरण का प्राण है स्वस्तिक। चाहे घर हो, मंदिर हो या और कोई स्थापत्य हो, स्वस्तिक का अंकन अवश्य होता है। लोक चित्रकला हो या मूर्तिकला, सबमें किसी-न-किसी तरह प्रतीक रूप में स्वस्तिक उपस्थित होता है।

पाठगत प्रश्न 5.6

रिक्त स्थानों का पूर्ति कीजिए :

1. स्वस्तिक संपूर्ण रूप से ..... और भारतीय संस्कृति का चिह्न है।
2. ..... की प्रथम उपस्थिति प्रागैतिहासिक चित्रों में कई जगह मिलती है।
3. स्वस्तिक का अंकन सर्वाधिक ..... तथा ..... में पाया जाता है।
4. स्वस्तिक लोक ..... का प्रतीक है।
5. स्त्रियाँ स्वस्तिक चिह्न ..... अनुष्ठान, ... अवसरों पर बनाना नहीं भूलतीं।

आपने क्या सीखा

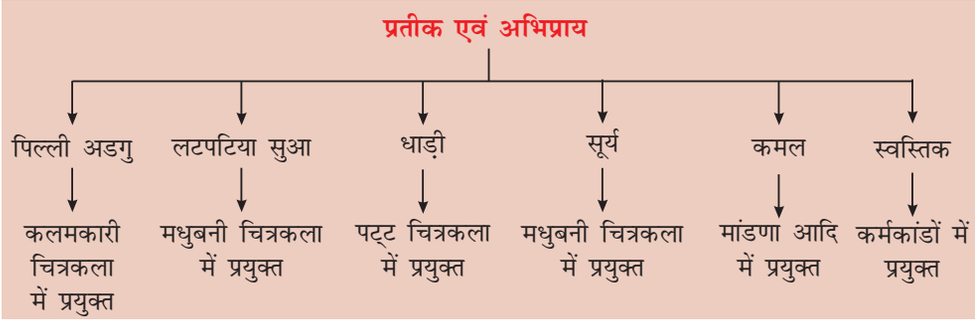

सीखने के प्रतिफल

- विभिन्न प्रकार के भूमि और भित्तिचित्रों की रचना के लिये अभिप्रायों का प्रयोग करते हैं।
- अपने घरों, मंदिरों अथवा भवनों की सज्जा के लिये प्रतीक बनाते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. भारतीय कला संस्कृति के प्रमुख तीन लोक प्रतीकों को परिभाषित कीजिए।
2. भारतीय चित्रकला परंपरा में रंग लोक प्रतीकों को विस्तार से समझाइए।
3. ज्यामितिक लोक प्रतीकों की चित्रकला में उपस्थिति और उनके अर्थ आशय लिखिए।
4. भारतीय चित्रकला में अभिप्राय और प्रतीक के महत्व को प्रतिपादित कीजिए।
5. लोक प्रतीकों का प्रयोग चित्रकला में कितना औचित्यपूर्ण है?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.1

1. पिल्ली अडगु
2. बिल्ली के पैरों के चिह्न
3. एम. मुनिरेड्डी
4. पीले, लाल तथा हरे रंग से

5.2

1. तोते
2. बिहार
3. नवदांपत्य जीवन के अमित प्रेम और सुख समृद्धि का प्रतीक
4. काली, लाल स्याही से बनाया जाता है।

5.3

1. (ii) ओडिशा
2. (iii) जगन्नाथ महापात्र

5.4

1. पारंपरिक
2. सूर्य
3. प्राकृतिक
4. महासुंदरी देवी
5. शाश्वत

5.5

1. लोकप्रतीक : कमल

2. कलाकार : अज्ञात

3. माध्यम : केनवास और रंग

4. आकार : 8' × 8'

5. रूप : चर्तुदल

5.6

1. मांगलिक
2. स्वस्तिक
3. मांडण, भित्तिचित्र
4. मंगल
5. व्रत-उपवास, मांगलिक

टिप्पणियाँ

6

लोक व जनजातीय कला का महत्व और उपयोगिता

प्रिय शिक्षार्थी! पिछले पाठ में हमने लोककला के क्षेत्र में प्रयुक्त प्रतीकों और रूपांकनों के बारे में सीखा। इस पाठ में हम लोक और जनजातीय कला के महत्व और प्रासंगिकता के बारे में जानेंगे। 'लोक' शब्द आम आदमी के जीवन से जुड़ा है। लोग 'प्रकृति' को एक जीवित शक्ति के रूप में पूजते हैं जो उनके अस्तित्व को नियंत्रित करती है। इस प्रकार विभिन्न मिथक और दंतकथाएँ प्राकृतिक शक्तियों के देवी-देवताओं से संबंधित हैं। जब लोग सूखे से पीड़ित हुए तो उन्होंने प्रार्थना की और बारिश के देवता 'वरुण' की पूजा की। इसी तरह, 'अग्नि'- अग्नि के देवता, 'पवन'- वायु के देवता, 'वसुंधरा'- पृथ्वी की देवी की भी कल्पना और पूजा की जाती थी। यहाँ तक कि पेड़, विशेष रूप से 'बरगद' के पेड़ और 'नारियल' के पेड़, कुछ आदिवासी समूहों; जैसे- 'संथाल', 'लोढ़ा' आदि में पूजे जाते है। जब जीवन में शांति और समृद्धि आई तो वे कला संबंधी गतिविधियों के लिए समय दे सकें।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद आप :

- लोक और जनजातीय कला की चार विभिन्न श्रेणियों को पहचान कर सकेंगे, जिन्हें उनके महत्व के अनुसार विभाजित किया गया है;
- लोक और जनजातीय कला के माध्यम से पूजे जाने वाले विभिन्न देवी-देवताओं को पहचान कर सकेंगे;
- लोक और जनजातीय कला से जुड़े राज्यों के नाम बता सकेंगे;
- इन कलाओं में प्रयुक्त सामग्री और रंगों में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- विभिन्न लोक और आदिवासी कलाओं को उनके महत्व और समकालीन मूल्यों के अनुसार वर्णित कर सकेंगे।

पहले ये कलारूप आम तौर पर घरों के अंदर बनाए जाते थे, इसलिए इस कला को आगे बढ़ाना महिलाओं की जिम्मेदारी बन गई, जिसने जल्द ही पारंपरिक कला का रूप धारण कर लिया। इन महिलाओं ने त्योहारों, धार्मिक कार्यों, विवाह और अन्य अनुष्ठानों के अवसर पर कला का निर्माण करना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे यह संचार का माध्यम बन गया। बाद में यह कला सजावटी रूप में बदल गई।

लोक और जनजातीय कलाओं को उनके महत्व के अनुसार चार श्रेणियों में बाँटा गया है :

1. दैवीय शक्तियों का सम्मान करने के एक उपकरण के रूप में
2. संचार के एक उपकरण के रूप में
3. जीवन की शांति और समृद्धि के लिए एक उपकरण के रूप में
4. सजावट के उपकरण के रूप में

6.1 लोक और जनजातीय कला : दैवीय शक्तियों का सम्मान करने का एक उपकरण

अब आप सौरा कला के बारे में जानेंगे।

शीर्षक : सौरा कला

राज्य : उड़ीसा

प्रकार : जनजातीय कला

अवधि : समकालीन

कलाकार : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

सौरा कला शायद भारत की सबसे दिलचस्प और आकर्षक आदिवासी कला परंपरा है। दुनिया भर में कई आदिवासी संस्कृतियों की तरह सौरा की कला आध्यात्मिक और धार्मिक मान्यताओं से प्रेरणा और दिशा लेती है। यह केवल एक कला का रूप नहीं है, बल्कि इसका बड़ा उपयोगी मूल्य है। यह पूजा के साधन और आह्वान के माध्यम के रूप में कार्य करती है। सौरा जनजाति भले ही आदिम है, पर यह ओडिशा की सबसे सक्रिय और जनजातियों में से एक है। इस जनजाति का मानना है कि उनकी दुनिया देवताओं, भूतों और प्रकृति की आत्माओं और उनके पूर्वजों से प्रभावित है। इन अदृश्य प्राणियों को जीवन के विभिन्न पहलुओं का नियंत्रण करने वाली शक्तियों के रूप में माना जाता है, वे ये भी मानते हैं कि प्रत्येक शक्ति का अपना प्रभाव क्षेत्र होता है।

सामान्य विवरण

इस कलाकृति (6.1) में, हम एक घर के रूप में सौर कला के सामान्य स्वरूप को जानेंगे, जैसेकि एक आयताकार या चौकोर आकार में 'कोठी' (अनाज) जो कि भरी होती है। यह मानव और

पशु आकृतियों की रचनाओं से भरा हुआ है, जिसे 'इत्तलम' कहा जाता है। प्रारंभिक रेखांकन के बाद कलाकार इसे पुजारियों को सुझाव के लिए भेजता है। फिर सुझाव के अनुसार- आवश्यक वस्तुओं को जोड़ता है। इस प्रकार चित्रकला में चेतन और निर्जीव वस्तुएँ, स्वदेशी पौधे, जानवर, उपकरण आदि शामिल होते हैं। हालांकि कुछ रोज़मर्रा की चीजें; जैसे- ट्रेन, कार और हवाई जहाज भी बाहरी दुनिया के संपर्क में आने के कारण बनाए जाते हैं।

चित्र 6.1: सौरा लोककला

यह चित्रकला शैली क्षेत्रगत आधार पर भिन्न होती है, लेकिन कुछ सामान्य समानताएँ भी हैं। सौरा चिह्न का प्रमुख वर्णक सफ़ेद है, जो चावल, राख, चाक या पानी के साथ मिश्रित चूने से प्राप्त होता है। ये पेंटिंग, जो मोटिफ़ के रूप में कार्य करती हैं, कलाकारों के धार्मिक विश्वास संबंधी विचारों का नाटकीयता रूप में प्रतिनिधित्व करती हैं। 'इत्तलम' या पेंटिंग केवल आध्यात्मिकता के लिए बनाई गई है, इसलिए चित्रकार इसमें अन्य कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता।

पाठगत प्रश्न 6.1

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्पा चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. सौरा किस प्रकार की कला है-
   (i) जनजातीय कला (ii) आधुनिक कला
   (iii) अमूर्त कला (iv) इनमें से कोई नहीं
2. सौरा लोग किस राज्य से संबंधित हैं-
   (i) पश्चिम बंगाल (ii) मध्य प्रदेश
   (iii) ओडिशा (iv) आंध्र प्रदेश

6.2 लोक और जनजातीय कला: संचार के एक उपकरण के रूप में

शिक्षार्थियों, आपने लोककला को परमात्मा के एक उपकरण के रूप में जाना है। अब आप लोककला को संचार साधन के रूप में जानेंगे।

शीर्षक : फड़ पेंटिंग
राज्य : राजस्थान
प्रकार : लोककला
समय : उन्नीसवीं सदी का आरंभ
कलाकार : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

आप जानते हैं कि लोक और जनजातीय कला संचार और मनोरंजन का माध्यम है। जब सिनेमा, रेडियो और टेलीविजन नहीं थे तो लोगों के जीवन में मनोरंजन का एकमात्र स्रोत 'अड्डा' (समूह में इकट्ठे होकर गपशप करना) और 'पुराणों' और लोक कथाओं का वर्णन करना था। यह कहा जा सकता है कि सिनेमा के सबसे पुराने रूपों में स्क्रॉल या फड़ पेंटिंग है। फड़ या लंबे चित्र स्क्रॉल फड़ चित्रकारों द्वारा निर्मित किए गए हैं, जिनमें से एक का वर्णन 'जोशियों' द्वारा विस्तार से किया गया है। गायक हमेशा एक युगल होते हैं जिन्हें 'भोपा' (पुरुष पुजारी) और 'भोपी' (महिला पुजारी) के रूप में जाना जाता है। पुरुष एक तार वाला वाद्ययंत्र बजाता है, जबकि महिला गायन में उसका साथ देती है। कथा के दौरान 'भोपा' या 'भोपी' द्वारा आयोजित अनुष्ठान में तेल का दीपक जलाया जाता है जो एक उल्लेखनीय विशेषता है।

सामान्य विवरण

फड़ चित्रकार अपने चित्रों का निर्माण घूम-घूमकर कथा सुनानेवालों के लिए करते हैं, जो गाँव के लोगों के लिए रात भर मनोरंजन प्रदान करते हैं। क्लासिक रचनाएँ; जैसे- 'देवनारायण की फड़' और 'पबूजी की फड़' जैसे प्रसिद्ध महाकाव्यों की कहानियों को इनमें वर्णित किया जाता

है। चित्रित विषय स्थानीय किंवदंतियों, विशेष रूप से 'पबूजी' और 'देवनारायण' (देवीजी), स्थानीय देवताओं की वीर कहानियों के आसपास के बनाए गए हैं। मनोरंजन प्रदान करने के लिए 'रामायण' और भगवान कृष्ण के जीवन की अनेक कहानियों को भी फड़ पर चित्रित किया गया है। गणेश की छवि भी बहुत लोकप्रिय है।

चित्र 6.2: फड़ पेंटिंग

फड़ को क्षैतिज रूप से चित्रित किया जा सकता है। प्रत्येक पैनल को एक कल्पनाशील ज्यामितीय डिज़ाइन द्वारा दूसरे से अलग किया जाता है। वर्तमान समय में अनेक छोटे-छोटे फलकों को भी एक ही शैली में चित्रित किया जाता है, जिसमें एक या दो आकृतियाँ और उनकी कहानियाँ संलग्न हैं। हाथियों और घोड़ों जैसे जानवरों का चित्रण और साँप, पक्षी, पेड़ और फूल जैसे पूरक आकर भी शामिल किए गए हैं। रंग बहुत सीमित हैं और इसमें केवल कुछ मूल रंग; जैसे- लाल, सफ़ेद, काला, नारंगी आदि शामिल हैं। यह कलाकृति केंद्र में गणेश को दो परिचारकों के साथ दिखाती है। उपयोग किए गए रंग आकर्षक और सजावटी हैं।

पाठगत प्रश्न 6.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्पा चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. युगल गायकों को किस नाम से जाना जाता है-

   (i) भोपा और भोपी (ii) देव और देवी

   (iii) पुरुष और महिला (iv) अभिनेता और अभिनेत्री

2. कौन-सा शास्त्रीय साहित्य फड़ चित्रों से संबंधित है-

   (i) बापूजी की फड़ (ii) फड़ पेंटिंग

   (iii) पाबूजी की फड़ (iv) भगवानजी का फड़ो

6.3 लोक और जनजातीय कला जीवन में शांति और समृद्धि के लिए

प्रिय शिक्षार्थी! अब हम वार्ली चित्रकला के बारे में जानेंगे।

शीर्षक : वार्ली पेंटिंग

राज्य : महाराष्ट्र

प्रकार : जनजातीय कला

कलाकार : अज्ञात

संग्रह : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

भारत में धार्मिक जीवन में महिलाओं की भूमिका दूसरों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। पूरे देश में विवाह, उपवास आदि जैसे अधिकांश घरेलू समारोहों में ये धार्मिक रस्में महत्वपूर्ण हैं। इन अनुष्ठानों के लिए महिलाएँ बचपन से ही पारंपरिक प्रशिक्षण प्राप्त करने लगती है। महाराष्ट्र में वार्ली पेंटिंग एक तरह की सामुदायिक रचनात्मक पेंटिंग है।

चित्र 6.3: वार्ली पेंटिंग

सामान्य विवरण

यह पेंटिंग महाराष्ट्र के ठाणे जिले की वार्ली जनजाति से जुड़ी है। यह भी पूरी तरह से गाँव की झोपड़ियों की भीतरी दीवारों पर बनाई गई है। इस चित्रकारी में अनुष्ठान चित्रकारी की एक लंबे समय से चली आ रही परंपरा है, जो मुख्य रूप से दो तीन 'सवासिनी' (एक महिला जिसका पति जीवित है) महिलाओं द्वारा विवाह के अवसर पर किया जाता है।

आकृतियों को एक गहरे रंग की पृष्ठभूमि पर बहुत महीन और हल्के रंग से चित्रित किया गया है जिसके परिणामस्वरूप एक झिलमिलाता प्रभाव दिखाई देता है। संकल्पनात्मक रूप से, आकृतियों को सीधी रेखाओं के प्राथमिक ज्यामितीय रूपों के सपाट आकार दिए गए हैं। वृक्ष समृद्धि का प्रतीक है जो जमीन के नीचे गहरा है। महिलाओं को औपचारिक गतिविधियों में व्यस्त दिखाया गया है। प्रत्येक के पास दीयों और अन्य प्रसाद के साथ एक थाली है। मोर के एक जोड़े को पेड़ की शाखा पर आनंद लेते हुए दिखाया गया है और सफ़ेद सूर्यदेव और चंद्रमा भगवान खुशी-खुशी सब कुछ देख लेते हैं। आम तौर पर तीन दिनों में शादी के दौरान, देवी की एक छवि को भी ढक कर रखा जाता है और बाद में दूल्हा और दुल्हन को दिखाया जाता है। इस अवसर को ताड़ी पीकर बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है।

पाठगत प्रश्न 6.3

1. वार्ली किस प्रकार की कला है?
2. वार्ली चित्रकला किस राज्य से संबंधित है?
3. इसे स्थानीय रूप से महाराष्ट्र में क्या कहा जाता है?
4. इस पेंटिंग के प्रमुख चित्रकार कौन हैं?

क्रियाकलाप

अपने क्षेत्र के विभिन्न त्योहारों में उपयोग की जाने वाली विभिन्न प्रकार की वार्ली कला के फोटो एकत्र कीजिए। अब ए-4 साइज की शीट लें और इन तस्वीरों को पेस्ट करें। इन चित्रों के विभिन्न रूपों के बारे में कुछ पंक्तियाँ लिखिए।

6.4 लोक और जनजातीय कला : सजावटी उपकरण के रूप में

आइए अब हम सजावटी उपकरण के रूप में उपयोग की जाने वाली लोककला के बारे में जानें।

शीर्षक : कांथा

राज्य : पश्चिम बंगाल

प्रकार : लोककला

अवधि : समकालीन

कलाकार : अज्ञात

संक्षिप्त परिचय

कांथा कारीगरी, भारतीय लोककला का एक अंग है। यह सूती कपड़े पर की जाती है। कांथा विशेष रूप से बंगाली महिलाओं द्वारा अपने घरों में कपड़ों पर सजावट के लिए रंग-बिरंगे धागों का प्रयोग करते हुए बनाया गया था। आजकल कलाकार नए कपड़ों का प्रयोग करने लगे हैं। कांथा की कला ग्रामीण महिलाओं के अद्‌भुत धैर्य, शिल्प-कौशल और साधन-संपन्नता का चित्रण करती है। वहाँ की रचना में हम सूक्ष्म अवलोकन और लगाव की गहरी अनुभूति पाते हैं। साथ ही प्रकृति का सौंदर्य परिवर्तन, जीवन की संपूर्णता (सुंदरता का गहरा बोध) तथा विलासिता को दूर करने की विशेषता प्रकट होती है।

चित्र 6.4: कांथा कला

पश्चिम बंगाल में कांथा बनाने की परंपरा का प्रतिनिधित्व ग्रामीण महिलाओं द्वारा किया जाता है। बंगाली लोग, विशेषा रूप से ग्रामीण महिलाएँ अत्यधिक धार्मिक होते हैं और वे स्वभाविक

रूप से अपने देवी-देवताओं से प्रभावित हैं। हिंदू कांथा रचनाकार धार्मिक प्रतीक चिह्नों और अपने देवी-देवताओं पर आधारित चित्र बनाती हैं, जबकि मुस्लिम महिलाएँ भौगोलिक एवं फूल, पत्तियों से अलंकरण करती हैं। आरम्भिक काल में लगभग सभी समुदायों की महिलाएँ कांथा कारीगरी करती थी, किन्तु आजकल सीमित एवं विशिष्ट खंड के समुदाय ही इस कला में संलग्न हैं।

सामान्य विवरण

कांथा का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है, जैसे- रजाई या बिस्तर के कवर (सुजनी), रूमाल, किताबों के कवर आदि। इनके अलावा, उन्हें परिवार के सदस्यों के लिए उपहार के रूप में उपयोग किया जाता है।

आजकल कांथा मुख्य रूप से सजावटों के लिए सीमित हैं, मुख्यत: साड़ी डिज़ाइन के लिए। कांथा का हर विवरण देश की साधारण महिलाओं की कल्पनाशक्ति और रचनात्मक कौशल को दर्शाता है। प्राय: कला के प्रति यह समर्पण ऐसा है जिसके बारे में लोग जान नहीं पाते, क्योंकि वे कांथा को अपना नाम नहीं देती, भले ही कुछ महिलाएँ अपने कंथा के काम को अपना नाम दे रही हों। कांथा स्टिच वाली साड़ियां अब चलन में हैं। यह रेशमी साड़ी कलाकार की उत्कृष्ट शिल्प-कौशल को दर्शाती है। इस डिज़ाइन में विभिन्न प्रकार के रूपांकनों का उपयोग किया जाता है। इसमें पुष्प, पशु, पक्षी और ज्यामितीय रूपांकनों को पूर्ण सामंजस्य और संतुलन में प्रस्तुत किया गया है। सभी प्रकार के रंग के धागों का प्रयोग किया जाता है, ज्यादातर चमकीले रंगों का इस्तेमाल किया जाता है।

पाठगत प्रश्न 6.4

1. कांथा किस प्रकार की कला है?
2. इसका संबंध किस राज्य से है?
3. 'कांथा' शब्द का क्या अर्थ है?
4. 'कांथा' में सामान्यत: प्रयुक्त होने वाली सामग्री कौन-सी है?

क्रियाकलाप

कांथा सिले हुए ड्रेस मटेरियल तो आपने देखा ही होगा। अपनी ड्राइंग शीट पर एक सुंदर पारंपरिक कांथा डिज़ाइन बनाइए साथ ही डिज़ाइन को मोटिफ्स से सजाइए।

आपने क्या सीखा

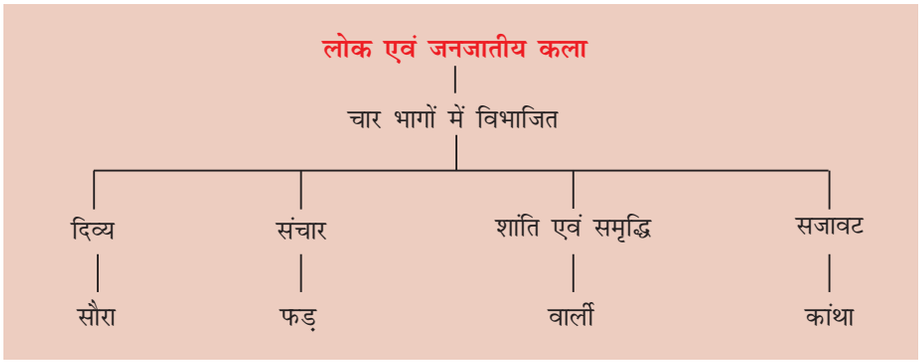

सीखने के प्रतिफल

शिक्षार्थी

- विभिन्न कलाकृति बनाने के लिए सौरा लोककला का उपयोग करते हैं।
- वस्तुओं को डिज़ाइन करने के लिए वार्ली कला-शैली का उपयोग करते हैं।

पठांत प्रश्न

1. लोक और जनजातीय कला को किन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है? प्रत्येक श्रेणी का एक उदाहरण भी दीजिए।
2. सौरा कला क्या है? सौरा कला का क्या महत्व है?
3. फड़ पेंटिंग क्या है? संचार के माध्यम के रूप में इसका उपयोग कैसे किया जाता है?
4. वार्ली पेंटिंग क्या है? महाराष्ट्र के वारली आदिवासी समुदाय में शांति और समृद्धि के प्रतीक के रूप में इसका उपयोग कैसे किया जाता है?
5. बंगाल में कांथा किस प्रकार कुटीर उद्योग बन गई है?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

1. (i) जनजातीय कला
2. (iii) ओडिशा

6.2

1. (i) भोपा और भोपी
2. (iii) पबूजी की फड़

6.3

1. जनजातीय कला
2. महाराष्ट्र।
3. समृद्धि का वृक्ष
4. अज्ञात

6.4

1. लोककला
2. पश्चिम बंगाल
3. सिलाई का काम कढ़ाई
4. सूती कपड़ा

7

संभावना और अवसर

प्रिय शिक्षार्थी, पिछले पाठ में हमने लोक और आदिवासी कला के महत्व को जाना। इस पाठ में हम इस क्षेत्र की संभावनाओं और अवसरों को जानेंगे। लोककला विषय का अध्ययन करने वाले शिक्षार्थियो एवं उनके अभिभावकों के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि इस विषय के पढ़ने के उपरांत छात्रों के लिए भविष्य में क्या संभावनाएँ एवं अवसर उपलब्ध होंगे? यद्यपि लोककला विश्व की प्राचीनतम कलाओं में से एक है, परंतु इस विषय का पठन-पाठन अपेक्षाकृत नया है। अत: इसके अध्ययन के उपरांत मिलने वाले रोज़गार एवं जीविका उपार्जन के अवसरों एवं अन्य संभावनाओं के बारे में जानकारी भी बहुत सीमित है।

भारत में परंपरागत रूप से लोककला और हस्तशिल्प लगभग एक-दूसरे का पर्याय ही समझे जाते हैं तथा यह व्यावसायिक जातियों के लिए सदियों से उनके जीविका उपार्जन का साधन रहें हैं। यह कला पारिवारिक रूप से एक पीढ़ी द्वारा अगली पीढ़ी को हस्तांतरित की जाती रही है। व्यावसायिक जातियों के बच्चे बचपन से ही अपने पैतृक व्यवसाय में हाथ बटाते हैं और स्वत: ही इस कला में पारंगत हो जाते हैं।

उददेश्य

इस पाठ के अध्ययन के बाद आप :

- लोककला के पारंपरिक स्वरूप एवं नए परिवेश में उसके व्यवसायिक महत्व को समझ सकेंगे;
- विश्व-पटल पर भारतीय लोककलाओं को किस प्रकार महत्व मिला, यह जान सकेंगे;
- सरकारी स्तर पर लोककलाओं के क्षेत्र में किए जा रहे प्रयासों के बारे में जान सकेंगे;
- लोककला के क्षेत्र में व्यावसायिक अवसरों पर चर्चा कर सकेंगे;
- लोककला के क्षेत्र में स्वयं के लिए भूमिका की संभावना खोज सकेंगे।

देश से बड़ी मात्रा में लोककला एवं हस्तशिल्प के निर्यात होने के कारण हज़ारों लोग इस निर्यात उद्योग से जुड़े हैं। दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, भुवनेश्वर, अहमदाबाद, सूरत, जयपुर, जोधपुर, लखनऊ, मुरादाबाद, सहारनपुर, फिरोजाबाद, आगरा, श्रीनगर, हैदराबाद एवं चेन्नै जैसे शहर हस्तशिल्प निर्यात के बड़े केंद्र बन गए हैं जहाँ से करोड़ों रुपए का व्यापार होता है।

इन सब के अतिरिक्त देशभर में हज़ारों स्वयंसेवी संस्थाएँ स्थानीय स्तर पर कार्यरत हैं जो लोककला एवं कलाकारों के हित में अनेक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाती हैं। राजस्थान, गुजरात, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, दिल्ली, पंजाब, जम्मू-कश्मीर एवं उत्तर-पूर्वी भारत में सैकड़ों स्वयंसेवी संस्थाएं हैं जिनसे लाखों की संख्या में लोक कलाकार संबद्ध हैं। इन संस्थाओं ने विश्व स्तर पर अपनी पहचान बनाई है और इनसे लाखों लोगों को रोज़गार मिल रहा है।

आज लोककला एवं हस्तशिल्प हमारे शहरी सामान्य जीवन का अभिन्न अंग बन चुकी है। सामान्य से सामान्य घर में भी घर की सजावट एवं दैनिक उपयोग के लिए अनेक प्रकार की लोककला कृतियों का उपयोग हो रहा है। घरों की आंतरिक सज्जा एक विशेष स्थान रखने लगी है। इन्टीयर डेकोरेटर या इन्टीरिया डिज़ाइनर विशेषज्ञ की श्रेणी में शामिल हो गया है। अनेक युवा इस कार्य में लगे हैं।

समय के साथ लोककलाओं का पारंपरिक स्वरूप बदला है। बढ़ते हुए शहरीकरण एवं औद्योगीकरण ने इसमें व्यापार, व्यवस्थापन एवं सेवओं के लिए अनेक अवसरों एवं रोज़गार की नई संभावनाएँ जगाई हैं।

7.1 आंचलिक क्षेत्र में संभावनाएँ

प्रिय शिक्षार्थी, लोककला के क्षेत्र में उपलब्ध विभिन्न अवसरों और संभावनाओं से हमें अवगत होने की आवश्यकता है।

शीर्षक : रघुराजपुर (ओडिसा)
स्थान : ओड़ीसा
प्रकार : कलाग्राम
समय : समकालीन

संक्षिप्त परिचय

पिछले कुछ दशकों में विशेषत: सन् 1980 के बाद भारतीय लोककलाएँ तथा हस्तशिल्प विश्व पटल पर अपनी छाप छोड़ने में सफल रही हैं। विश्व बाज़ार में इनकी माँग और भारतीय शिल्पकारों की उत्पादन क्षमता को पहचाना गया है। भारत सरकार द्वारा विश्व के प्रमुख देशों में आयोजित किए गए 'भारत महोत्सवों' ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। रूस, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी एवं जापान जैसे देशों में आयोजित इन महोत्सवों में भारतीय लोककलाओं एवं कलाकारों के अनेक कार्यक्रम एवं प्रदर्शनियाँ प्रस्तुत की गई हैं। इनमें सैकड़ों लोक कलाकारों ने अपनी कला का प्रदर्शन किया और विश्वविख्यात हो गए। इस सबका एक लाभ यह हुआ कि भारतीय लोककला को समूचे विश्व में सराहना मिली और उसके लिए एक नया बाज़ार तैयार हो गया। भारत के लोककलाकारों द्वारा नई लोक कलाकृतियों एवं हस्तशिल्प का निर्यात अनेक देशों को होने लगा।

विदेशी मुद्रा की आय में आशातीत वृद्धि हुई। लोककलाओं एवं हस्तशिल्प का व्यापार एवं उद्योग जीविकोपार्जन का एक नया उद्यम बनकर उभरा।

सामान्य विवरण

ओड़ीसा के पुरी शहर के निकट एक छोटे से गाँव रघुराजपुर में कई कलाकार परिवार कला का सृजन करते हैं। हर परिवार के अलग-अलग कला कक्ष हैं, जिनमें हर तरह की पारंपरिक लोककला की रचना होती है। इनमें पटचित्र, ताड़पत्र चित्र, मुखौटा, लकड़ी के खिलौने एवं कमरे को सजाने के लिये कलाकृतियों का सृजन होता है। ये कलाकार वंशानुगत कुशलता द्वारा इन कलाकृतियों की रचना करते आ रहे हैं। इनमें कुछ तकनीकी परिवर्तन हो चुके हैं, परंतु विषयवस्तु में विशेष बदलाव नहीं आया। परिवार के सभी सदस्य चाहे वे वृद्ध हों, परिवार के मुख्य सदस्य हों या किशोर किशोरी, कला रचना में अपना-अपना योगदान देते हैं।

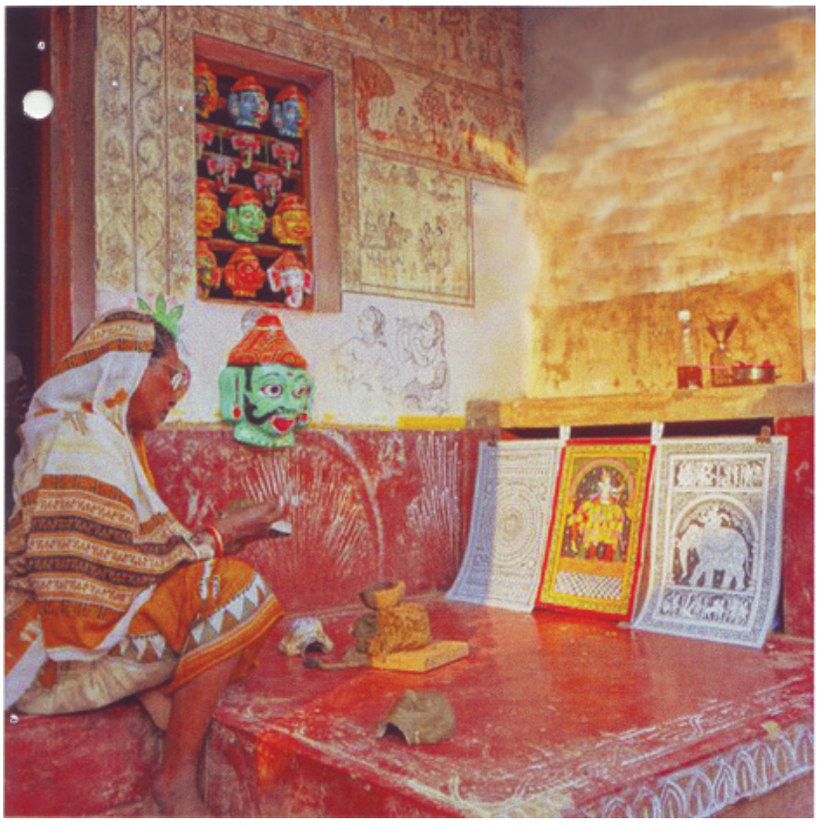

चित्र 7.1: रघुराजपुर (ओडिशा)

इस चित्र में रघुराजपुर कलाक्षेत्र का एक कलाकक्ष दिखाई देता है। परिवार की मुख्य गृहणी कला रचना कर रही है। उनके हाथ में जगन्नाथ देव का एक लकड़ी का पुतला है, जिसपर वह रंग लगा रही है। देशी एवं विदेशी पर्यटक यहाँ सदैव आते रहे हैं और इन कलाकारों की प्रशंसा करके खरीदारी भी करते हैं। विशेष रूप से इनमें छोटे-छोटे पटचित्र तथा विभिन्न प्रकार की पेपर मैशी के मुखौटों की बहुत माँग है। इस चित्र में इन सभी कलाकृतियों का प्रदर्शन किया गया है। विशेष रूप से मुखौटे का उज्ज्वल रंग, पर्यटक को बहुत ही आकर्षित करता है।

पाठगत प्रश्न 7.1

1. ओड़ीशा के कलाकारों के गाँव का नाम बताइए।
2. रघुराजपुर का मुख्य उत्पाद क्या है?
3. इन कला कार्यों के मुख्य विषय क्या हैं?

7.2 काला घोड़ा उत्सव, मुम्बई

अब आप, मुम्बई के काला घोड़ा उत्सव के बारे में जानेंगे।

शीर्षक : काला घोड़ा उत्सव
स्थान : मुम्बई
प्रकार : क्राफ्ट मेला
समय : समकालीन

संक्षिप्त परिचय

विदेश में ही नहीं भारत में भी हस्तशिल्प एवं लोककलाओं के प्रति आमलोगों में जागरूकता बढ़ी और वे इस क्षेत्र को एक नई दृष्टि से देखने लगे। देश में इसकी बढ़ती माँग को देखते हुए भारत सरकार द्वारा देशभर में हस्तशिल्प प्रदर्शनियाँ एवं मेलों का आयोजन किया जाने लगा। इसी क्रम में हरियाण के फरीदाबाद के पास प्रतिवर्ष आयोजित 'सूरजकंड क्राफ्ट मेला' देश का सबसे प्रमुख क्राफ्ट मेला बन गया। यहाँ प्रतिवर्ष देश के कोने-कोने से सैकड़ों लोकशिल्पी आते हैं और लाखों लोग करोड़ों रुपये की हस्तशिल्प सामग्री खरीदते हैं।

चित्र 7.2: काला घोड़ा उत्सव, मुम्बई

सामान्य विवरण

इसकी सफलता से उत्साहित होकर अनेक क्राफ्ट मेलों का आयोजन होने लगा जिनमें मुम्बई का 'काला घोड़ा उत्सव' तथा 'नेचर बाज़ार' प्रमुख हैं जहाँ देश के हज़ारों हस्तशिल्पियों एवं लोककला उद्यमियों को रोज़गार के अपार अवसर प्राप्त होते हैं।

देश के अंदर हस्तशिल्प एवं लोककलाओं की स्थायी माँग एवं शिल्पकारों को नियमित बाज़ार उपलब्ध कराने हेतु सरकार ने देश की राजधानी दिल्ली में 'दिल्ली हाट' नाम से एक विशेष एवं स्थाई क्राफ्ट बाज़ार स्थापित किया जहाँ सालभर देश के विभिन्न प्रांतों से आए शिल्पकार लाभान्वित होते हैं। इसकी सफलता को देखते हुए सरकार ने देश के अनेक बड़े शहरों, जैसे- मुम्बई, कोलकाता, भुवनेश्वर, अहमदाबाद, भोपाल, आगरा आदि में हस्तशिल्प हाट बाज़ार स्थापित किए हैं तथा लोकशिल्पियों एवं उद्यमियों हेतु जीविकोपार्जन के अवसर जुटाए हैं।

पाठगत प्रश्न 7.2

सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प चुनकर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. किस देश में भारत महात्सव का आयोजन हुआ-

   (i) फ्रांस (ii) चीन

   (iii) कोरिया (iv) यूके

2. भारत में प्रमुख शिल्प मेला का नाम है-

   (i) बड़ा मेला (ii) सूरजकुंड मेला

   (iii) सामयिक मेला (iv) इनमें से कोई नहीं

7.3 कालीघाट पट्टचित्र, कोलकाता

शीर्षक : कालीघाट पट्टचित्र

स्थान : कोलकाता, पश्चिम बंगाल

प्रकार : पटुवा पाड़ा

समय : समकालिक

संक्षिप्त परिचय

पश्चिम बंगाल की राजधानी कोलकता के पश्चिम में विख्यात कालीबाड़ी स्थित है। धार्मिक हिंदुओं के लिये यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण तीर्थस्थान है। इस मंदिर के सन्निकट एक क्षेत्र में पटुवा या मूर्ति बनाने वाले कलाकार रहते हैं। बंगाल की संस्कृति में पूरे साल तरह-तरह के देवी-देवताओं की पूजा होती है, जिनमें दुर्गा, काली, सरस्वती आदि देवियाँ शामिल हैं। इन देवियों की पूजा दो प्रकार की होती है- 1. पारिवारिक 2. सार्वजनिक। इसी कारण इन देवियों की प्रतिमाओं की

माँग पूरे वर्ष रहती है। ये पटुवा कलाकार इन देवियों की मूर्तियाँ बनाते हैं। ये कलाकार अपनी निजी शैली की चित्रकला भी करते हैं, जिसे पट्टचित्र नाम से जाना जाता है।

चित्र 7.3: कालीघाट पट्टचित्र

सामान्य विवरण

कालीघाट के पटुवा बहुत ही सामान्य सामग्री द्वारा चित्रकला की रचना करते हैं। मूलत: कपड़ा तथा मिट्टी की बनाई हुई थाली पर ये कलाकार चित्र बनाते हैं। पारंपरिक रूप से ये वनस्पति रंगों का प्रयोग करते हैं, लेकिन आजकल बाज़ार से प्राप्त रंगों का ही प्रयोग होता है। इस चित्र में हम एक पटुवा कलाकार को चित्र बनाते देख सकते हैं। अत्यंत सामान्य परिवेश में वह एक चटाई पर बैठकर चित्र बना रहा है। सौ वर्षों से ये गिनी-चुनी विषयवस्तु पर ही पारंपरिक चित्र बनाते हैं। इनमें देवी-देवताओं की प्रतिमा मुख्य है, परंतु बीसवीं सदी के प्रारंभ में इन कलाकारों ने समकालीन सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक विषयों पर आलोचना करते हुए भी चित्र बनाए हैं। आज के समय में कालीघाट चित्रकार व्यवसायिक दृष्टिकोण के चलते देवी-देवताओं के चित्र कागज़ पर भी बनाने लगे हैं। बाज़ार में इन चित्रों की बहुत माँग है।

पाठगत प्रश्न 7.3

1. कोलकता में लोककला के मुख्य केंद्र का क्या नाम है?
2. काम करने वाले लोक कलाकारों को किस नाम से पुकारा जाता है?
3. पटुवा द्वारा कौन-कौन से देवी-देवताओं के मूर्ति शिल्प अथवा पट्ट चित्र बनाए जाते हैं?
4. कालीघाट के कलाकारों द्वारा प्रयोग की जाने वाली दो सामग्रियों के नाम लिखिए।

क्रियाकलाप

स्थानीय पुस्तकालय अथवा आर्ट गैलरी जाकर अनेक प्रकार के पट्टचित्र एकत्रित करके 1/2 इंपीरियल आकार की ड्राइंग शीट पर चिपकाकर इन चित्रों का सुंदर कोलाज तैयार कीजिए।

7.4 निजी क्षेत्र में संभावनाएँ

आप में से अधिकांशत: दिल्ली हाट से परिचित होंगे। आइए, अब इसकी विस्तृत जानकारी प्राप्त करें।

शीर्षक : दिल्ली हाट
स्थान : दिल्ली
प्रकार : मेला
समय : समकालीन

संक्षिप्त परिचय

लोककला पाठ्यक्रम का एक उद्देश्य ऐसे शिक्षित वर्ग को तैयार करना भी है जो भारतीय लोककला-हस्तशिल्प के विभिन्न पहलुओं को अच्छी तरह समझता हो और जो इस क्षेत्र में स्वयं एक उद्यमी के तौर पर कुशलतापूर्वक कार्य कर सके अथवा इस क्षेत्र में कार्यरत बड़े उद्यमियों को अपनी विशेषज्ञ सेवाएँ देकर न केवल उनके कार्य में सहयोग कर सके, बल्कि स्वयं के लिए भी रोज़गार के अवसर जुटा सके।

आज विश्व की अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भारत से लोककला एवं हस्तशिल्प का आयात करती है। इन कंपनियों ने अपने कार्यालय भारत में स्थापित किए हैं। वे शिल्पियों एवं स्थानीय उद्यमियों से सीधे संपर्क स्थापित कर उन्हें अपनी माँग के अनुरूप वस्तुओं के उत्पादन का आर्डर देती हैं तथा तैयार उत्पाद खरीदती हैं। अनेक आयातक कंपनियों के अधिकारी भारत के हस्तशिल्प उत्पादक केंद्रों का दौरा करते हैं। भारत के अनेक शहरों में ऐसी स्थानीय एजेंसियाँ बन गई हैं जो इन विदेशी आयातक कंपनियों की उनके इस कार्य में सहायता करती हैं। वे विदेशी आयातकों एवं देशी शिल्पकारों एवं हस्तशिल्प निर्माताओं के बीच संपर्कसूत्र का कार्य करती हैं। यहाँ लोककला के जानकार कर्मचारियों के लिए अच्छी संभावनाएँ बनी रहती हैं।

सामान्य विवरण

'दिल्ली हाट' देश की राजधानी दिल्ली में लोककला एवं शिल्प को बढ़ावा देने के लिए स्थापित किया गया है। हाट का अर्थ है बाज़ार। देश के कोने-कोने से, सभी राज्यों से कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करने हेतु इस बाज़ार में आते हैं। इनमें कुछ की स्थाई दूकाने होती हैं, कुछ की अस्थायी जिससे बदल-बदल कर दूसरे राज्यों की कलाकृतियाँ लेकर कलाकार आते रहते हैं। हरेक 15 दिनों में दिल्ली हाट में प्रदर्शनी बदलती रहती है। इनके नाम भी बदलते रहते हैं। कभी शिल्प मेला, कभी ट्राईबल मेला आदि। दिल्ली हाट को दरअसल 1994 में दिल्ली टूरिज्म एंड ट्रांसपोरटेशन डेवलपमेंट कारपोरेशन (डिटीटीडीसी) द्वारा स्थापित किया गया था।

चित्र 7.4: दिल्ली हाट

दिल्ली हाट में प्रवेश करने पर ऐसा लगता है जैसे भारत के किसी गाँव में आ गए हैं। शहर के बीच भारत के छोटे राज्यों में गाँवों की कलाकृतियों की नुमाइश बरबस लोगों को लुभाने के लिये सक्षम है। इस हाट की मुख्य विशेषता यह है कि गाँवों के बाज़ार को एक मार्डन रूप में विकसित किया गया है जिसके कारण गाँव के रहन-सहन का अंदाजा शहर में रहने वाले लोग या विदेशी कला प्रेमी भी लगा सकते हैं। इसी कारण देशी तथा विदेशी भी यहाँ एक बार ज़रूर आते है। विभिन्न तरह की कलाकृतियाँ, वस्तुएँ यहाँ तक कि विभिन्न राज्यों की खाने-पीने की चीज़ें आपकों यहाँ मिल सकती है, जिस कारण भारत के विभिन्न प्रदेशों के रहन-सहन, खान-पान और कला का अन्दाजा आसानी से लगाया जा सकता है। यहाँ कई कलाकार अपनी दुकानों में कलाकृति बनाते हुए आपको दिख सकते हैं। वस्त्र बनाते हुए, पेटिंग करते हुए इन कलाकारों से हम मिल सकते हैं। उनके प्रदेश की कला के बारे में जानकारी हासिल कर सकते हैं। यहाँ सूती-रेशमी कपड़े, ऊनी कपड़े एम्ब्राइडरी, गहने, घर की सजावट की वस्तुएँ आसानी से मिल सकती हैं। साथ ही यहाँ लोककला से जुड़े सांस्कृतिक कार्यक्रम, नृत्य आदि भी हाट की सुंदरता को बढ़ा देते हैं।

पाठगत प्रश्न 7.4

1. लोककला के विद्यार्थी के लिए निजी क्षेत्र में रोज़गार की क्या संभावनाएँ है?
2. भारतीय हस्तशिल्प की विदेशी आयतक कंपनियों में लोककला के शिक्षार्थियों हेतु क्या अवसर हैं?
3. भारत के कौन-से शहर हस्तशिल्प निर्यात के बड़े केंद्र बन गए हैं?
4. दिल्ली हाट लोककला मेले का प्रारंभ कब हुआ?

क्रियाकलाप

अपने आसपास आयोजित होने वाले किसी शिल्प मेले में जाइए। अब मेले के साथ अपना अनुभव लिखिए और मेले में आपको जो कुछ भी रोचक लगे, उसका वर्णन कीजिए।

7.5 सरकारी क्षेत्र में संभावनाएँ

शिक्षार्थी! अब आप सरकारी क्षेत्र में विभिन्न अवसरों का विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

शीर्षक : सूरजकुंड लोककला मेला

स्थान : हरियाणा

उत्सव : वार्षिक मेला

समय : समकालीन

संक्षिप्त परिचय

भारत सरकार एवं प्रादेशिक सरकारों के अनेक कार्यालय देशभर में फैले लोक कलाकारों एवं हस्तशिल्पियों के हितों की रक्षा के लिए एवं उन्हें विभिन्न सुविधाएँ उपलब्ध कराने हेतु कार्यरत हैं। इनमें हज़ारों कर्मचारी भी कार्यरत हैं। भारत सरकार के हस्तशिल्प विकास निगम के कार्यालय समूचे देश में फैले हुए हैं जो देश भर में लोककला की मार्केटिंग का आयोजन करते हैं। वे नए डिज़ाइन एवं तकनीक संबंधी ट्रेनिंग देते हैं एवं देश-विदेश में इस संबंध में जागरूकता फैलाने

हेतु अनेक कार्यक्रम करते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक राज्य में उस राज्य सरकार द्वारा संचालित राज्य हस्तशिल्प निदेशालय होता है जिसमें कर्मचारी राज्य के हस्तशिल्पियों के हित में कार्य करते हैं। वे देश में बड़े-बड़े शहरों में स्थापित अपने शोरूम एवं एम्पोरियमों के माध्यम से उस राज्य की विशेष लोककलाओं का प्रचार-प्रसार करते हैं।

सामान्य विवरण

'सूरजकुंड क्राफ्ट मेला' देश का सबसे प्रमुख क्राफ्ट मेला है। यहाँ प्रतिवर्ष देश के कोने-कोने से सैकड़ों लोकशिल्पी आते हैं और लाखों लोग हस्तशिल्प की सामग्री खरीदते हैं। दरअसल सूरजकुंड शिल्पकला का बहुत बड़ा बाज़ार है। सूरजकुंड क्राफ्ट मेला एक वार्षिक उत्सव मेला है जो हरियाणा राज्य के फरीदाबाद में स्थित है। यहाँ पर भारत की कला का प्रदर्शन होता है। यहाँ के कलाकारों की कला का प्रदर्शन सार्क देशों में भी उपलब्ध कराया जाता है।

चित्र 7.5: सूरजकुंड क्राफ्ट मेला

सामान्य विवरण

सूरजकुंड मेला सर्वप्रथम 1987 में फरीदाबाद में आयोजित किया गया था। यहाँ भारत के विभिन्न राज्यों के चित्रकार, मूर्तिकार, बुनकर, कलाकार अपनी लोककला का प्रदर्शन करते हैं। अलग-अलग राज्यों के स्टाल उनकी कलाकृतियों से सजे होते हैं, साथ ही उनके कलाकार भी अपनी कलाकृति बनाते हुए अपनी कला की जानकारी देते हैं। 17 दिन के इस मेले में कलाओं का संगम होता है। सबसे बेहतरीन स्टाल को पुरस्कृत किया जाता है। इसके अलावा विभिन्न कलाकारों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं। सूरजकुंड मेला वह मंच है जहाँ भारत की विभिन्नता और समृद्धि सहित हमारे लोककला कुशल हस्तकरघा उद्योग उपस्थित होते हैं। सभी प्रकार के कुशल-अकुशल उद्यमी कलाकारकर्मी अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। उन्हें अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिए सार्क देशों में जाने का मौका भी मिलता है।

पाठगत प्रश्न 7.5

1. सूरजकुंड का मेला किस राज्य के किस शहर में लगता है?
2. सूरजकुंड मेला साल में कितनी बार लगता है?
3. किस वर्ष सर्वप्रथम सूरजकुंड मेला लगना प्रारम्भ हुआ था?

कार्यकलाप

किसी स्थानीय क्राफ्ट मेले में जाइए और अपना अनुभव लिखिए। मेले के किसी रोचक पहलू का भी वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

आपने क्या सीखा

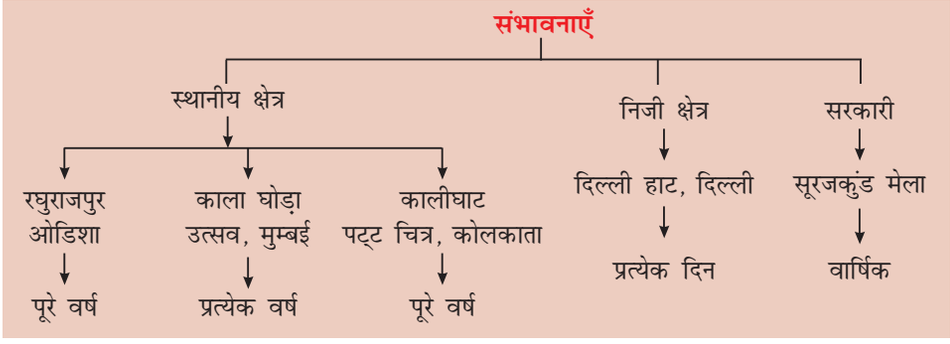

सीखने के प्रतिफल

शिक्षार्थियो

- अपनी निर्मित कृतियों को प्रदर्शित कर सकते हैं।
- लोक तथा आदिवासी शैलियों के सम्मिश्रण से नया कला बना सकते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. विश्व बाज़ार में भारतीय लोककला की पहचान कैसे बनी?
2. भारत के कुछ महत्वपूर्ण क्राफ्ट मेलों के नाम लिखिए।
3. भारत में हस्तशिल्प के व्यापार के लिए 'हाट बाज़ार' किन शहरों में स्थापित किए गए हैं?
4. भारत में हस्तशिल्प के निर्यात के बड़े केंद्र कौन-से हैं?
5. भारत सरकार एवं राज्य सरकार के कौन-से कार्यालय लोककलाकारों के हित में कार्यक्रम चलाते हैं?
6. लोककला विषय के विद्यार्थियों हेतु रोज़गार की क्या संभावनाएं हैं?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

7.1

1. उड़ीसा में एक छोटे से गाँव रघुराजपुर में है।
2. तालपट्ट चित्रण, मुखौटे, लकड़ी के खिलौने एवं कमरे को सजाने हेतु विभिन्न कलाकृतियों का सृजन किया जाता है।
3. मुख्य विषय जगन्नाथ देव की तथा बलराम की लकड़ी की मूर्तियों का सृजन तथा पेंटिंग कार्य बहुतायात में किया जाता है।

7.2

1. (i) फ्रांस
2. (ii) सुरजकुंड

7.3

1. कलकत्ता में पश्चिमी भाग में कालीबाड़ी नामक एक प्रसिद्ध स्थान है, जो लोककला का मुख्य केंद्र है।
2. काम करने वाले कलाकारों को पटुवा नाम से पुकारा जाता है।
3. मुख्य रूप से दुर्गा, काली एवं सरस्वती देवी इत्यादि की मूर्तियाँ एवं पट्ट चित्रों का सृजन करते हैं।

7.4

1. निजी क्षेत्र में बड़े देशी-विदेशी उद्यमियों को अपनी विशेषज्ञ सेवाएँ दे सकते हैं।
2. विदेशी आयातक एवं स्थानीय शिल्पियों एवं उद्यमियों के मध्य संपर्क सूत्र का कार्य कर सकते हैं।
3. दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, भुवनेश्वर, अहमदाबाद, सूरत, जयपुर, जोधपुर, लखनऊ, मुरादाबाद, सहारनपुर, फिरोजाबाद, आगरा, श्रीनगर, हैदराबाद एवं चेन्नै।
4. दिल्ली हाट मेला परिसर का प्रारम्भ 1994 में हुआ था।

7.5

1. सूरजकुंड मेला फरीदाबाद शहर में तथा हरियाणा राज्य में लगता है।
2. एक बार
3. 1987

शब्दकोष

लोककला	:	जन सामान्य द्वारा बनाई गई कला
हस्तशिल्प	:	हाथों से बनया गया शिल्प
आयात	:	दूसरे देश से क्रय कर समाना मँगाना
निर्यात	:	दूसरे देश को सामान भेजना
जीवकोपार्जन	:	अपनी आजीविका कमाना
उपरांत	:	बाद में
उत्पादक	:	उत्पादन करने वाले
आंतरिक सज्जा	:	घर के अंदर की सजावट

माध्यमिक स्तर
लोककला पाठ्यक्रम

भूमिका

भारत एक विशाल देश है जिसका हर कोना अपनी लोककला से समृद्ध है। लोककला में विभिन्न सामाजिक समूहों द्वारा निर्मित विभिन्न वस्तुओं का अंकन होता है जो पारंपरिक जीवन-शैली, संस्कृति और प्रशिक्षण पर आधारित होता है। लोककला सामान्यत: लोगों द्वारा बिना किसी शिक्षा या थोड़ी शिक्षा के साथ या बिना किसी कलात्मक प्रशिक्षण के साथ कला-सृजन की भावना न होते हुए भी बनाई जाती है। लोक कलाकारों ने सदियों से अपने कला को लगातार बनाए रखा है। आज भी वह अपने को सामान्य प्रशिक्षित कलाकार जैसा कलाकार नहीं मानते। ये लोग लोककला का उपयोग अपने घरों को, उपयोगी सामानों को, बर्तनों को, मूर्तियों को व अन्य उपयोग की वस्तुओं को सजाने के लिए करते है। ये लोक कलाकार सामान्यत: अपने पारिवारिक व्यवसाय को करते हुए परंपरागत रूप से शिक्षित होते हैं। ये सामान्य लोग बहुत ही साधारण तरीकों और साधारण सामग्री के प्रयोग से कला का निर्माण करते है। वे आसपास की सामान्य वस्तुओं के प्रयोग से रंगों का और ब्रशों का निर्माण करते है। रंगों का निर्माण विभिन्न वनस्पतियों से और खनिज-पदार्थों से किया जाता है। लोक कलाकार अपनी कला में प्रांतीय विभिन्नता के साथ पारंपरिक प्रतीकों व अलंकारों का प्रयोग करते हैं। ये अलंकरण पशु, पक्षी, पौधों, फूलो और प्रतीक के रूप में होते हैं।

आवश्यकता और तार्किकता

लोककला पीढ़ी-दर-पीढ़ी अनौपचारिक रूप से बिना किसी कलात्मक प्रशिक्षण के चली आ रही है, क्योंकि कलाकारों के लिए शिक्षा व प्रशिक्षण की सुविधा नहीं थी। इसलिए लोककला अपने महत्व को बड़ी मात्र में खो रही है और लोगो को आकर्षित करने व कला को जीवित बनाए रखने में नाकामयाब हो रही है। इसलिए वर्त्तमान समय में लोककला से संबंधी पाठ्यक्रम को शुरू करने की आवश्यकता पड़ी जिससे लोककला को जीवित रखा जा सके।

यह पाठ्यक्रम पढनेवालों को कुशल लोककला के निर्माण के लिए प्रेरित करेगा और लोककला की परंपरा को जीवित रखेगा। यह लोगों में एक प्रेरणा देकर स्रोत के रूप में काम करेगा जो लोगो में लोककला से निर्मित वस्तुओं के प्रति लगाव को बढ़ाएगा और कलाकारों की कलात्मक भावना को संतुष्ट करेगा। इसी के साथ यह पाठ्यक्रम कला कुशलता को बढ़ाएगा और लोगों की आर्थिक सहायता का आधारा बनेगा क्योंकि लोककला में देश-विदेशों में अपने महत्व को साबित करने की पूरी योग्यता है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के उपरान्त आप :

- लोककला को पहचान सकेंगे;
- अलग-अलग माध्यम, तकनीक व शैली की लोककलाओं का अभ्यास कर सकेंगे;

- लोककला की सराहना के लिए कला के प्रति सौंदर्य बोध व कुशलता का विकास कर सकेंगे;
- अपने घरों के दीवारों, उपयोग की वस्तुओं, बर्तनों, कपड़ों इत्यादि को सजा सकेंगे;
- लोककला के माध्यम से रोज़गार प्राप्त कर सकेंगे।

लक्ष्य-समूह

लोककला के प्रमाणित पाठ्यक्रम के लिए कम-से-कम 14 वर्ष की आयु होनी चाहिए तथा पहले से लोककला के ज्ञान की आवश्यकता नहीं है

शैक्षिक प्रशिक्षण कक्षा 8 तक हो या स्वयं द्वारा कक्षा 8 तक के ज्ञान का प्रमाणपत्र भी मान्य होगा।

पाठ्यक्रम-संरचना

लोककला का माध्यमिक स्तर का पाठ्यक्रम निम्नलिखित पाँच खंडों में विभाजित है–

सिद्धांत 40 अंक

मॉड्यूल 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना

मॉड्यूल 2: माध्यम, तकनीक, शैली

प्रायोगिक : 60 अंक

मॉड्यूल 3 : भित्ति चित्र

मॉड्यूल 4 : ज़मीन पर बने चित्र

मॉड्यूल 5 : चित्रों के अन्य माध्यम

कुल अंक : 100

पाठ्यक्रम का विवरण

सिद्धांत **40 अंक**

मॉड्यूल 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना 20 अंक

प्रस्तावना

कलात्मक अभिव्यक्ति मानव जाति की मुख्य स्वाभाविक प्रवृत्ति है और कला की यह क्रिया उतनी ही पुरानी है जितने पाषण काल के भित्ति चित्र हैं। यह सभी जानते हैं कि लोककला का जन्म प्रारंभिक काल में ही हो चुका था जो आज तक मानव-जाति के लिए लोकप्रिय बनी रही। प्रतीक और चिह्नों से कला के प्रदेश का पता लगाया जा सकता है विषय और स्वभाव से हर प्रदेश की लोककला अलग होती है। हालाँकि कुछ विशेषताओं के कारण इनमे समानता भी होती है। ये कलाएँ विशेष कलाकारों के द्वारा नहीं, सामान्य मानव द्वारा निरंतर प्रस्तुत की जाती है और जीवन का एक विशेष अंग मानी जाती हैं।

पाठ 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना

पाठ 2: लोक व जनजातीय कला का परिचय

पाठ 3: कलाकारों और विद्वानों का योगदान

मॉड्यूल 2: माध्यम, तकनीक, शैली 20 अंक

प्रस्तावना

लोककला में मानव-जीवन का सुंदर और साधारण अंकन होता है। ये जहाँ बनाई जाती हैं उस प्रदेश व लोगों की जीवन शैली का अंकन करती हैं। कला के माध्यम, तकनीक और शैली प्राकृतिक वातावरण तथा प्रादेशिक विशेषताओं में उस प्रदेश की परंपरा को दिखाती हैं। लोककला की कलात्मक प्रकृति और आत्मा को समझने के लिए देश की विभिन प्रदेशों की लोककलाओं का अध्ययन किया जा सकता है। देश के कुछ हिस्सों में घरों को सुबह साफ कर दिया जाता है। घर के आस-पास के हिस्सों को धोकर साफ किया जाता है और गिली मिट्टी से लेप किया जाता है। मुख्य दरवाज़े की ज़मीन पर अलंकरण बनाया जाता है जिसे रंगोली कहते हैं। घर के दरवाज़े पर रोज रंगोली बनाना उनकी दिनचर्या का विशेष हिस्सा है। दीवारों और ज़मीन पर बने अलंकार घरवालों के सुखी और शांतिपूर्ण जीवन का प्रतीक माना जाता है। हर उत्सव, अवसर और त्यौहार के लिए अलग-अलग अलंकरण होते है। ये अस्थायी होते है लेकिन मानव के इस विश्वास को दिखाते हैं कि मानव हमेशा अपने परिवेश को और अधिक सुंदर बनाता रहेगा। प्रयोग की जाने वाली सामग्री में सफेद चॉक, चावल का आटा, नींबू और वातावरण में उपस्थित सामग्री होती है।

काम के आधार पर सामग्री बदल दी जाती है और तकनीक या विधि के आधार पर कला को पहचाना जा सकता है, क्योंकि समय के साथ कई नयी तकनीकों को शामिल किया गया है। यह एक रोज़गारपरक पाठ्यक्रम है। विद्यार्थी रूचि के अनुसार रोज़गार का चयन कर सकते है।

पाठ 4 : पारंपरिक और समकालीन विधि और सामग्री

पाठ 5 लोककला के चिह्न और प्रतिक

पाठ 6 लोक व जनजातीय कला का महत्व और उपयोगिता

पाठ 7: संभावना और अवसर

प्रायोगिक 60 अंक

मॉड्यूल 3 : भित्ति चित्र 20 अंक

प्रस्तावना

मनुष्यों को अपने वातावरण में सुंदरता अच्छी लगती है इसलिए वे घरों की दीवारों पर, ज़मीनों पर प्रतीकों व चिह्नों से सजावट करते है। यह दर्शाता है कि मनुष्य में सुंदरता के प्रति विशेष लगाव है। वे अपने घरों को कलात्मक आकृतियों से सजाते है। इस प्रकार की चित्रकला कला के क्षेत्र में विशेष स्थान रखती है, उदाहरणस्वरुप कुछ विशेष अवसरों और त्योहारों पर महिलाएँ और लड़कियाँ विशेष प्रकार के अलग-अलग विषयों से संबंधित भित्ति चित्र व रंगोली बनाती हैं। विशेष रूप से तब, जब अच्छी खेती होती है या त्यौहार होते है तो ये लोग अपने घरों को अलग-अलग प्रतीकों और चिह्नों से सजाकर सुंदर और खुशहाल वातावरण बनाते है। कला के ये विभिन्न रूप अलग-अलग प्रदेशों के और समय के लोगों की जीवन शैली, सामाजिक सोच और उनकी समझ को दिखाती है।

पाठ 1: मधुबनी चित्रशैली

पाठ 2: वार्ली चित्रशैली

पाठ 3: सांझी कला

पाठ 4: पिथौरा चित्रकला

मॉड्यूल 4 : ज़मीन पर बने चित्र 20 अंक

प्रस्तावना

ज़मीन पर बनाये जाने वाले चित्र सामान्यत: महिलाओं और लड़कियों द्वारा घर के मुख्य दरवाज़े पर या आँगन में बनाए जाते हैं। ज़मीन को साफ करके पहले डिज़ाइन बनाया जाता है जो सामान्यत: त्यौहार या मौसम से संबंधित होता है। अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग डिज़ाइन बनाए जाते है। कुछ प्रदेशों में गोल, चोकोर और त्रिकोण आकृतियाँ बनायीं जाती है, तो कहीं पर सीधी लाइन के साथ साधारण प्रतीकों का प्रयोग होता है। इसे लोककला में सामग्री, तकनीक और शैली का चयन कला बनाने के तरीके पर निर्भर करता है इसलिए दूसरी लोककला की तुलना में इस कला में सामग्री का उपयोग, तकनीक का प्रयोग, शैली का अभ्यास थोड़ा अलग होता है।

पाठ 5: रंगोली

पाठ 6: अल्पना

पाठ 7: कोलम (केरल में कलम)

पाठ 8: मंडणा

मॉड्यूल 5 : चित्रों के अन्य माध्यम 20 अंक

प्रस्तावना

समय और विभिन्न कारणों तथा आवश्कताओं के कारण लोककला का स्वरुप और माध्यम बदल गया है। यद्यपि परिवर्तन के लिए लोगों ने भी इसमें बहुत सारे प्रयोग किए है और इस कला की एक नई कला-शैली को जन्म दिया है, जिसमें कपड़े, मिट्टी, लकड़ी के साथ कठपुतली का चित्र प्रसिद्ध है। ये सभी कला के रूप मनोरंजन के साथ ही सुंदरता के साधन हैं। आजकल बहुत से लोग इस प्रकार की कलाकृति को बनाने और बाजार तक पहुँचाने के काम में लगे हैं। क्योंकि इस कला की माँग न सिर्फ़ भारत, बल्कि विदेशों में भी बहुत ज़्यादा बढ़ रही है।

पाठ 9: कपड़े पर बने चित्र

पाठ 10: मिट्टी की वस्तुओ पर बने चित्र

पाठ 11: लकड़ी के वस्तुओं पर बने चित्र

पाठ 12: कठपुतली का निर्माण

मूल्यांकन प्रणाली

मूल्यांकन प्रणाली	समय (घंटे में)	अंक	
सिद्धांत	2		40
प्रायोगिक	3		60
सिद्धांत			
मॉड्यूल 1: लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना			**20**
पाठ 1 लोक व जनजातीय कला क परिचय		7	
पाठ 2 लोक व जनजातीय कला के रूप		6	
पाठ 3 कलाकारों और विद्वानों का योगदान		7	
मॉड्यूल 2: माध्यम, तकनीक और शैली	2		**20**
पाठ 4 पारंपरिक और समकालीन विधि और सामग्री		7	
पाठ 5 लोककला के प्रतीक एवं अभिप्राय		7	
पाठ 6 लोक व जनजातीय कला का महत्व और उपयोगिता		6	
पाठ 7 : संभावना और अवसर			
प्रायोगिक			
मॉड्यूल 3: भित्तिचित्र			**20**
पाठ 1 मधुबनी चित्रशैली		5	
पाठ 2 वर्ली चित्रशैली		5	
पाठ 3 सांझी कला		5	
पाठ 4 पिथौरा चित्रकला		5	
मॉड्यूल 4: ज़मीन पर बने चित्र			**20**
पाठ 5 रंगोली	3	5	
पाठ 6 अल्पना		5	
पाठ 7 कोलम (केरला में कलम)		5	
पाठ 8 मांडणा		5	
मॉड्यूल 5: चित्रों के अन्य माध्यम			**20**
पाठ 9 कपड़े पर बने चित्र		5	
पाठ 10 मिट्टी की वस्तुओं पर बने चित्र		5	
पाठ 11 लकड़ी की वस्तुओं पर बने चित्र		5	
पाठ 12 कठपुतली का निर्माण		5	

प्रश्न पत्र डिजाइन

विषय : लोककला कोड संख्या-244 **स्तर : माध्यमिक**

अधिकतम अंक (थ्योरी) : 40 **समय : 1 घंटे**

1. उद्देश्यों द्वारा वेटेज

उद्देश्य	कुल अंकों का %	अंक
ज्ञान	35%	14
समझ	25%	10
उपयोग	40%	16
कुल	**100%**	**40**

2. प्रश्नों के प्रकार के अनुसार वेटेज

प्रश्नों के प्रकार	प्रश्नों की संख्या	प्रति प्रश्न अंक	कुल अंक
बहुवैकल्पिक प्रश्न	15	1	15
बहुत संक्षिप्त उत्तर	5	1	5
संक्षिप्त उत्तर	5	2	10
दीर्घ	2	5	10
कुल	**30**		**40**

3. सामग्री द्वारा वेटेज

मॉड्यूल	अंक
1. लोक व जनजातीय कला की प्रस्तावना	19
2. माध्यम, तकनीक और शैली	21
कुल	**40 अंक**

4. प्रश्न पत्र का कठिनाई स्तर

स्तर	कुल अंकों का %	अंक
कठिन	20%	4
औसत	50%	12
आसान	30%	7
कुल	**100%**	**23**

लोककला (244)

नमूना प्रश्नपत्र

बहु विकल्पीय प्रश्न

नोट: किसी 20 प्रश्नों का उत्तर दें 20×1=20 अंक

प्रत्येक प्रश्न का अंक एक् है।

दिये गए विकल्पों में से सही उत्तर का चयन करें।

मॉड्यूल-1 **20 अंक**

1. 20वीं शताब्दी के आरंभ में भारतीय लोक और जनजातीय कला का परिचय संसार से किसने कराया

   (क) जगदीश स्वामिनाथन (ख) कमला देवी

   (ग) प्यूपुल जयकर (घ) सभी

2. किसी विदेशी विद्वान की पहचान करें जिसने भारतीय लोक कला के साथ ग्रामीण और जनजातीय संस्कृति से संसार को परिचित कराया

   (क) स्टेला क्रेमरिश (ख) पैब्लो पिकासो

   (ग) माइकिल एंजेलो (घ) सभी

3. ऑस्ट्रिया की एक कला इतिहासकार भारतीय लोक कला पर अपने शोध कार्य के लिये प्रसिद्ध हुई। वे कौन हैं?

   (क) अमृता शेरगिल (ख) स्टेला क्रेमरिश

   (ग) प्यूपुल जयकर (घ) अन्य

4. स्टेला क्रेमरिश को रबिंद्रनाथ टैगोर ने कहां के कला विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिये निमंत्रित किया

   (क) शांतिनिकेतन (ख) कोलकत्ता कला महाविद्यालय

   (ग) देहली कौलेज ऑफ आर्ट (घ) बेंगलुरु

5. भारत में गौंड कला के क्षेत्र के प्रसिद्ध कलाकारों में से किसी एक का नाम

   (क) सीता देवी (ख) जनगढ़ सिंह श्याम

   (ग) गंगा देवी (घ) डा. वेरियर एल्विन

6. ब्रितानी एंथ्रोपोलॉजिस्ट जो उत्तर पूर्वी भारत के लोक और जनजातीय कला क्षेत्र में योगदान देने के लिये भारत आये

(क) डा. वेरियर एल्विन (ख) गुरुप्पा चेट्टी

(ग) जिव्या सोम मासे (घ) अन्य

7. 'द ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन' के लिये 1975 में साहित्य अकादमी द्वारा किसे पुरस्कृत किया गया

(क) जनगढ़ सिंह (ख) प्यूपुल जयकर

(ग) डा.वेरियर एल्विन (घ) गंगा देवी

8. भारतीय लोक कला के अंतरराष्ट्रीय कला प्रशंसकों का ध्यान आकर्षित करने के लिये इनके द्वारा भारतीय लोक कला पर कुछ पुस्तकें लिखी गयीं, वे कौन हैं?

(क) गंगा देवी (ख) सीता देवी

(ग) कमला देवी (घ) गीता देवी

9. जनगढ़ सिंह ने कौन से विधान सभा भवन पर एक बश्हद् भित्ति चित्र बनाया है

(क) मध्य प्रदेश (ख) उत्तर प्रदेश

(ग) असम (घ) पश्चिम बंगाल

10. जनगढ़ सिंह की कलाकृतियों के विषय सामान्यतया क्या होते हैं

(क) पक्षी (ख) पशु

(ग) देवता (घ) सभी

11. आंध्र प्रदेश के एक प्रसिद्ध कलमकारी कलाकार

(क) जिव्या सोम मासे (ख) गुरुप्पा शेट्टी

(ग) सीता देवी (घ) कमला देवी

12. इन्होंने लोक और जनजातीय कला उत्सवों का विदेश में आयोजन किया

(क) स्टेला क्रेमरिश (ख) कमला देवी

(ग) प्यूपुल जयकर (घ) सीता देवी

13. बिहार की मधुबनी चित्रकला के/की प्रसिद्ध कलाकार

(क) कमला देवी (ख) सीता देवी

(ग) जनगढ़ सिंह (घ) जिव्या सोम मासे

14. खड़िया और चौक का प्रयोग इसे बनाने में होता है

(क) सफेद रंग (ख) नीला रंग

(ग) लाल रंग (घ) हरा रंग

15. फेब्रिक रंगों का इस पर चित्रकला करने के लिये प्रयोग होता है

(क) कागज (ख) कपड़ा

(ग) प्लाईबोर्ड (घ) कैनवस

16. पारंपरिक चित्रकला इनके प्रयोग से होती थी

(क) एकृलिक रंग (ख) तैल रंग

(ग) वेजिटेबल और नेचरल रंग (घ) वाटर रंग

17. समकालीन चित्रकला में प्रयोग किये जाने वाला पदार्थ

(क) दीप कालिख (ख) गेरु

(ग) पलाश (घ) स्याही

18. व्यावसायिक लोक चित्रकारों द्वारा प्रयोग किये जाने वाले ब्रुश इनकी पूंछ के बालों द्वारा बनाये जाते हैं

(क) गिलहरी (ख) घोड़े

(ग) गधे (घ) हिरण

19. लोक और जनजातीय चित्रों को बनाने की पद्धति

(क) छिड़काव (ख) छापना

(ग) ग्राफ (घ) एब्स्ट्रैक्ट

20. वेजिटेबल रंगों में बाइंडर के रूप में प्रयोग किये जाने वाला पदार्थ

(क) हिंगुल (ख) हरताल

(ग) सिंदूर (घ) गोंद

21. हल्दी का प्रयोग इस पारंपरिक रंग को बनाने के लिये होता है

(क) नीला रंग (ख) पीला रंग

(ग) लाल रंग (घ) हरा रंग

22. प्राकृतिक नीला रंग इससे उत्पन्न होता है

(क) नील अथवा इन्डिगो (ख) दीप कालिख

(ग) हिंगुल (घ) पलाश

23. बांस का प्रयोग इसके लिये होता है

(क) रेखा चित्र (ख) रंग

(ग) ब्रश (घ) सभी

24. आजकल का पसंदीदा रंग का प्रकार

(क) फैब्रिक (ख) पोस्टर

(ग) तैल (घ) अन्य

25. सिंधु घाटी सभ्यता की वस्तुओं पर चित्रण के लिये प्रयोग किये जाने वाले पदार्थ

(क) खड़िया (ख) गेरु

(ग) दीप कालिख (घ) सभी

लोककला (244)

सब्जेक्टिव प्रश्नपत्र **समय: 1½ घंटा**

अंक : 20

1. अंक वाले प्रश्न का उत्तर लगभग 10 शब्दों में दीजिए।
2. अंक वाले प्रश्न का उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिए।
3. अंक वाले प्रश्न का उत्तर लगभग 50 शब्दों में दीजिए।

---

1. अति लघु प्रश्न **अंक 1×4=4**

सभी प्रश्नों अनिवार्य हैं :

(i) भारत में भित्ति चित्रकला का एक उदाहरण दें।

(ii) भारत में शैल चित्रकला का एक उदाहरण दें।

(iii) संप्रेषण के माध्यम के रूप में प्रयोग किये जाने वाली लोक कला का उदाहरण दें।

(iv) कंथा कला किस प्रांत से संबंधित है?

2. लघु प्रश्न **अंक 2×4=8**

सभी प्रश्नों अनिवार्य हैं :

(i) मधुबनी चित्रों से संबंधित क्षेत्र क्या कहलाता है? यह किस प्रांत से संबंधित है?

(ii) वरली जनजाति के जीवन में वरली चित्रों का क्या महत्त्व है?

(iii) फड़ चित्रकला में 'भोपा' और 'भोपी' का क्या महत्त्व है?

(iv) कड़ाई के कार्य से संबंधित कौन सी कला है? विभिन्न समुदायों द्वारा किस प्रकार के नमूनों का प्रयोग होता है?

दीर्घ प्रश्न **अंक 4**

3. प्रागैतिहासिक कला से लोक और जनजातीय चित्रकला के विकास का वर्णन करें।

या

रॉक पेंटिंग क्या है? प्रागैतिहासिक शैल चित्रकला का एक उदाहरण दीजिए

4. सौरा कला की प्रासंगिकता बताइये। इस कला का क्या महत्व है।

या

महाराष्ट्र में वर्ली पेंटिंग को शांति और समृद्धि के प्रतीक के रूप में कैसे उपयोग किया जाता है?

लोककला (244)

अंक योजना

1. (i) जोगिमारा चित्र।

   (ii) भीमबेटका चित्र।

   (iii) राजस्थान के फड़ चित्र

   (iv) कंथा कला पश्चिम बंगाल से संबंधित है।

2. (i) मधुबनी चित्रकला से संबंधित क्षेत्र को 'मिथिला' कहा जाता है। अत: मधुबनी चित्रकला को 'मिथिला चित्रकला भी कहा जाता है। यह बिहार प्रांत से संबद्ध है। पाठ-1 पृष्ठ 7-8

   (ii) वरली चित्र महाराष्ट्र के ठाणे जिले से संबंधित हैं। शांति तथा समृद्धि के लिये ये चित्र विधि-विधान द्वारा बनाये जाते हैं। दो-तीन 'सवासिनी' (वह स्त्री जिसका पति जीवित है) स्त्रियों द्वारा विवाह के अवसर पर इन्हें बनाया जाता है तथा देवी की एक ढकी हुई प्रतिमा भी रखी जाती हैजिसे वर-वधु को दिखाया जाता है। इस अवसर को धूम-धाम से मनाया जाता है तथा तड़ी का सेवन किया जाता है। पाठ-6 पृष्ठ 68-69

   (iii) फड़ चित्र लंबे सूचि पत्र रूप में होते हैं, जिनमें स्थानीय नायकों अथवा रामायण आदि की कथाओं के विषय चित्रित होते हैं। इनका वर्णन सामान्यतया 'भोपा' (पंडित) तथा 'भोपी' (पंडिता) की जोड़ी द्वारा गायन करके होता है। भोपा के द्वारा तंत्री वा। का वादन किया जाता है तथा भोपी उसका गायन में साथ देती है। वर्णन के समय 'भोपा' अथवा 'भोपी' के हाथ में लालटेन होना एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। पाठ-6 पृष्ठ 66-67

   (iv) 'कंथा' सूती कपड़े पर कड़ाई का कार्य है। पश्चिम बंगाल में कंथा कार्य की परंपरा हिंदू तथा मुस्लिम दोनों समुदायों की ग्रमीण महिलाओं में प्रचलित है। हिंदू कंथा कारीगर धार्मिक नमूनों, जैसे देवी-देवता आदि का चयन करते हैं, जबकि मुस्लिम महिलायें ज्यामितीय प्रारूप, प्रकृति चित्रण आदि तक सीमित होती हैं। पाठ-6 पृष्ठ 70-71

3. लोक और जनजातीय कला का उद्‌गम स्रोत प्रागैतिहासिक कला में पाया जाता है। भारतीय प्रागैतिहासिक कला के आरंभिक रूप मध्य प्रदेश के भीमबेटका स्थित शैल चित्र तथा जोगीमारा स्थित भित्ति चित्र माने जाते हैं। भित्ति चित्र शैल चित्रों का कुछ संशोधित रूप था। पत्थर अथवा दीवार पर खड़िया तथा गेरु या अन्य पदार्थ का लेप लगाया जाता था। इस लेप पर कलाकार चित्र बनाकर उसमें रंग भरता था। कालांतर में प्रागैतिहासिक शिकारियों तथा भोजन एकत्र करने वालों ने खेती करना आरंभ कर दिया। कुछ ने खेती को अपना लिया, जबकि कुछ शिकारी तथा भोजन एकत्र करने वाले बने रहे। इस असमान जीवन शैली, विकास और अन्य घटकों की झलक उनकी कला में भी आ गई। अत:, गुफा चित्रों ने दो भिन्न धाराओं को जन्म दिया:

   लोक कला (वे लोग जिन्होंने खेती को अपनाया) तथा

   जनजातीय कला (वे लोग जो शिकारी और भोजन एकत्र करने वाले रहे) पाठ-1 पृष्ठ 1

या

भारत के प्रागैतिहासिक शैलचित्रों को अब मात्रात्मक और गुणात्मक रूप से प्रमुख महत्व के कार्यों के रूप में माना जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में शिकारियों और भोजन इकट्ठा करने वालों का निवास था। बाद में पुरातात्विक खोजों से साबित हुआ कि शिकारी और भोजन इकट्ठा करने वाले सबसे पहले लोग थे जो भारतीय धरती पर अस्तित्व में थे। इसके अलावा, उनकी उपस्थिति न केवल पत्थर के औजारों और अन्य उपकरणों द्वारा प्रमाणित होती है, बल्कि एक निश्चित तिथि के बाद, रॉक पेंटिंग और रॉक उत्कीर्णन द्वारा भी प्रमाणित होती है। साथ ही, प्रत्येक चित्र प्रागैतिहासिक भारतीय कला की प्रारंभिक अभिव्यक्ति में मूल्यवान है। सामान्यत: ये चित्र वृत्त के बिंदु से बनाए जाते थे और वृत्त ज्यामितीय आकृतियों से भरे होते थे। हमारे देश में लगभग सात सौ ऐसे स्थल हैं और प्रत्येक स्थल पर एक से तीस गुफाएँ हैं, जहाँ लोग रहते थे। मध्य प्रदेश का श्भीमभेटकाश उनमें से एक है।

पाठ-1 पृष्ठ 2-3

4. सौरा कला ओदिशा की सौरा जनजाति से संबंधित है तथा उनकी आध्यात्मिक तथा धार्मिक मान्यताओं से प्रेरित है। जनजातीय कला का यह स्वरूप सौरा जनजाति के लिये पूजा का माध्यम है। ये चित्र, जो कलाकार की आध्यात्मिक सोच का प्रतिबिंब तथा धार्मिक मान्यताओं का रूपांतरण हैं, नमूनों के रूप में प्रसाद का कार्य करते हैं। ' इत्तलम' या चित्र परमात्मा हेतु बनाया जाता है, अत: चित्रकार समर्पित होता है तथा आडंबर का प्रयास नहीं करता है।

सौरा कला शायद भारत की सबसे दिलचस्प और आकर्षक आदिवासी कला परंपरा है। दुनिया भर की कई आदिवासी संस्कृतियों की तरह, सौरा की कला उनकी आध्यात्मिक और धार्मिक मान्यताओं से प्रेरणा और दिशा लेती है। यह सिर्फ एक कला का रूप नहीं है बल्कि इसका अत्यधिक उपयोगितावादी मूल्य है। यह पूजा के साधन और आह्वान के माध्यम के रूप में कार्य करता है। पाठ-6 पृष्ठ 64-65

या

वार्ली पेंटिंग महाराष्ट्र के ठाणे जिले की वारली जनजातियों से जुड़ी है। यह गांव की झोपड़ियों की भीतरी दीवारों में भी बनाई जाती है। इस पेंटिंग में अनुष्ठानिक पेंटिंग की एक पुरानी परंपरा है, जो मुख्य रूप से विवाह के अवसर पर की जाती है। संकल्पनात्मक रूप से, आकृतियों को सीधी रेखाओं के प्राथमिक ज्यामितीय रूपों के सपाट आकार दिए जाते हैं। युद्धात्मक पेंटिंग में पेड़ समृद्धि का प्रतीक है जो जमीन के नीचे गहरी जड़ें जमाए हुए है, महिलाओं को औपचारिक गतिविधियों में व्यस्त दिखाया गया है, सूर्य देव और चंद्रमा देवता खुशी से सब कुछ नजरअंदाज कर देते हैं। आम तौर पर तीन दिनों तक चलने वाले विवाह के दौरान, देवी की एक छवि को भी ढककर रखा जाता है और बाद में दूल्हा और दुल्हन के सामने प्रकट किया जाता है। आकृतियों को गहरे रंग की पृष्ठभूमि पर बहुत बारीक और हल्के रंग से चित्रित किया गया है जिसके परिणामस्वरूप एक झिलमिलाता प्रभाव उत्पन्न होता है। ऐसा कहा जाता है कि वर्ली पेंटिंग शांति और समृद्धि के प्रतीक के रूप में प्रयोग की जाती है।

पाठ-6 पृष्ठ 68-69

पहला मोड़

पाठों के विषय में प्रतिपुष्टि (Feed back on Lessons)

पाठ संख्या	पाठ का नाम	विषय वस्तु			भाषा		उदाहरण		आपने क्या सीखा	
		कठिन	रोचक	भ्रामक	सरल	जटिल	उपयोगी	उपयोगी नहीं	अत्यंत सहायक	सहायक नहीं
1.										
2.										
3.										
4.										
5.										
6.										
7.										

अन्तिम मोड़ और बंद कर दीजिए

चौथा मोड़

तीसरा मोड़

प्रतिपुष्टि प्रपत्र को आज ही भरे तथा डाक से भेजें

प्रिय शिक्षार्थियो

अपनी पाठ्य पुस्तकों को पढ़कर आपको आनंद आया होगा। हमने पाठ्य सामग्री को यथासंभव प्रासंगिक तथा रूचिकर बनाने के लिये भरसक प्रयास किया है। विषय सामग्री का विकास आप और हम दोनों पर निर्भर करता है। आपकी प्रतिपुष्टि विषय सामग्री को सुधारने में हमारी सहायता करेगी। अपने समय में से कुछ मिनट अवश्य निकाले तथा प्रतिपुष्टि प्रपत्र को भर कर हमें भेज दीजिए ताकि एक रूचिकर तथा उपयोगी विषय सामग्री का निर्माण किया जा सके।

धन्यवाद

समन्वयकर्ता

(लोककला)

प्रश्नों के विषय में प्रतिपुष्टि (Feed back on Questions)

पाठ संख्या	पाठ का नाम	पाठगत प्रश्न		पाठान्त प्रश्न		
		उपयोगी	उपयोगी नहीं	सरल	कठिन	अत्यंत कठिन
1.						
2.						
3.						
4.						
5.						
6.						
7.						

दूसरा मोड़

आपके सुझाव

_____

_____

_____

_____

क्या आपने लोककला के अध्ययन के लिये कोई अन्य पुस्तक पढ़ी है? हाँ/नहीं

यदि हाँ तो उसे पढ़ने का कारण दें।

_____

_____

नाम : _____

नामांकन संख्या : _____

पता : _____

_____

विषय : _____

पुस्तक संख्या : _____

सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
ए - 24-25, इंस्टीट्यूशनल एरिया
सेक्टर - 62 नोएडा (यू.पी.)

डाक टिकट

किसी अनुलग्नक की अनुमति नहीं